इग्नू
जन जन का
विश्वविद्यालय

BECC-101

प्रारंभिक व्यष्टि-अर्थशास्त्र

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो. इंद्राणी राय चौधरी
सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. एस. के. सिंह
अवकाश प्राप्त आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. जी. प्रधान
अवकाश प्राप्त आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

श्री आई.सी. धींगरा
अवकाश प्राप्त सहआचार्य
शहीद भगत सिंह कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

डॉ. एस. पी. शर्मा
सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
श्याम लाल कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. बी. एस. बागला
अवकाश प्राप्त सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
पीजीडीएवी कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

श्रीमती नीति अरोड़ा
सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र)
माता सुंदरी कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

श्री सोगतो सेन
सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. नारायण प्रसाद
आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. नारायण प्रसाद

पाठ्यक्रम निर्माण दल

खंड / इकाई सं.	विषय प्रवेश	इकाई लेखक एवं हिंदी अनुवादक
खंड 1	**परिचय**	
इकाई 1	अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय	श्री आई.सी. धींगरा, अवकाश प्राप्त सहआचार्य, शहीद भगत सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – श्री. बी.एस. बागला, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 2	माँग एवं आपूर्ति विश्लेषण	
इकाई 3	माँग और आपूर्ति : व्यावहारिक अनुप्रयोग	
खंड 2	**साधन बाज़ार**	
इकाई 4	उपभोक्ता व्यवहार गणनावाचक दृष्टिकोण	डॉ. विजेता बनवारी, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र) महाराजा सूरजमल संस्थान, नई दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – श्री सुरेंद्र कुमार शर्मा, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र), श्यामलाल कॉलेज, दिल्ली
इकाई 5	उपभोक्ता व्यवहार : क्रमवाचक दृष्टिकोण	
खंड 3	**उत्पादन एवं लागतें**	
इकाई 6	एक परिवर्ती आगत का उत्पादन फलन	डॉ. वी.के.पुरी, सह-आचार्य (अर्थशास्त्र), श्याम लाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – श्री मनदीप कुमार, प्रवक्ता– अर्थशास्त्र, राजकीय प्रतिभा विद्यालय, वसंत कुंज, नई दिल्ली
इकाई 7	दो एवं दो से अधिक आगतों का उत्पादन फलन	
इकाई 8	लागत फलन	
खंड 4	**बाज़ार संरचना**	
इकाई 9	पूर्ण प्रतियोगिता : फर्म एवं उद्योग के संतुलन	डॉ. एस.पी. शर्मा, सह-आचार्य–अर्थशास्त्र, श्याम लाल कॉलेज, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान अवकाश प्राप्त सहआचार्य–अर्थशास्त्र, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिरसागंज, फिरोजाबाद
इकाई 10	एकाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	श्रीमती श्रुति जैन, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र) माता सुंदरी कॉलेज, नई दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान
इकाई 11	एकाधिकारिक प्रतियोगिता : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	
इकाई 12	अल्पाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	
खंड 5	**साधन बाज़ार**	
इकाई 13	साधन बाज़ार : साधन कीमत निर्धारण	डॉ. नौसीन निज़ामी, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र पं. दीन दयाल उपाध्याय, पेट्रोलिम विश्वविद्यालय, अहमदाबाद **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान
इकाई 14	श्रम बाज़ार	
इकाई 15	भूमि बाज़ार	
खंड 6	**आर्थिक क्षेम : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका**	
इकाई 16	आर्थिक क्षेम : पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत आवंटनात्मक दक्षता	डॉ. एस.पी. शर्मा, सह-आचार्य (अर्थशास्त्र) श्याम लाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान
इकाई 17	बाज़ार तंत्र की दक्षता : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका	डॉ. ममता महर, पोस्ट डॉक्टरल फेलो, वेल्यूचेंन एवं न्यूट्रीशन कार्यक्रम, वर्ल्ड फिश, मलेशिया **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान

पाठ्यक्रम संपादक : प्रो. नारायण प्रसाद एवं श्री बी. एस. बागला

सामग्री निर्माण	कार्यालयी सहायक
श्री मनजीत सिंह अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन), इग्नू, नई दिल्ली	सुश्री कामिनी डोगरा आशुलिपिक, एसओएसएस, इग्नू, नई दिल्ली

जनवरी, 2019

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019*

ISBN :

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली–110068 से अथवा इग्नू की आधिकारिक वेबसाइट www.ignou.ac.in से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

लेजर टाइप सेट– ग्राफिक प्रिंटर्स, मयूर विहार फेस 1, दिल्ली – 110091

मुद्रण –

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विषय वस्तु

खंड / इकाई	विषय प्रवेश	पृष्ठ संख्या
खंड 1	**परिचय**	**4**
इकाई 1	अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय	7
इकाई 2	माँग एवं आपूर्ति विश्लेषण	26
इकाई 3	माँग और आपूर्ति : व्यावहारिक अनुप्रयोग	51
खंड 2	**उपभोक्ता व्यवहार का सिद्धांत**	
इकाई 4	उपभोक्ता व्यवहार : गणनावाचक दृष्टिकोण	73
इकाई 5	उपभोक्ता व्यवहार : क्रमवाचक दृष्टिकोण	92
खंड 3	**उत्पादन एवं लागतें**	
इकाई 6	एक परिवर्ती आगत का उत्पादन फलन	129
इकाई 7	दो एवं दो से अधिक आगतों का उत्पादन फलन	142
इकाई 8	लागत फलन	172
खंड 4	**बाज़ार संरचना**	
इकाई 9	पूर्ण प्रतियोगिता : फर्म एवं उद्योग के संतुलन	203
इकाई 10	एकाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	223
इकाई 11	एकाधिकारिक प्रतियोगिता : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	246
इकाई 12	अल्पाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	264
खंड 5	**साधन बाज़ार**	
इकाई 13	साधन बाज़ार : साधन कीमत निर्धारण	291
इकाई 14	श्रम बाज़ार	306
इकाई 15	भूमि बाज़ार	319
खंड 6	**आर्थिक क्षेम : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका**	
इकाई 16	आर्थिक क्षेम : पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत आवंटनात्मक दक्षता	333
इकाई 17	बाज़ार तंत्र की दक्षता : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका	347
शब्दावली		358
कुछ उपयोगी पुस्तकें		369

प्रारंभिक व्यष्टि अर्थशास्त्र : परिचय

यह पाठ्यक्रम कला स्नातक (अर्थशास्त्र ऑनर्स) कार्यक्रम करने वाले छात्रों को व्यष्टि अर्थशास्त्र के आधारभूत सिद्धांतों से परिचय कराता है। इस पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य छात्रों के बीच व्यष्टि अर्थशास्त्र के मूलभूत सिद्धांतों की अवधारणात्मक आधारशिला रखना है ताकि वे माध्यामिक व्यष्टि अर्थशास्त्र-I एवं माध्यमिक व्यष्टि अर्थशास्त्र-II को भली-भाँति समझ सकें तथा इन सिद्धांतों का वास्तविक जीवन की घटनाओं के विश्लेषण में अनुप्रयोग कर सकें।

अर्थशास्त्र एक प्रयोगात्मक एवं व्यावहारिक विषय है। इस विषय का सैद्धांतिक ज्ञान विभिन्न आर्थिक अभिकर्ताओं को इस प्रकार के निर्णय लेने में मदद करता है : किन वस्तुओं का उत्पादन करना है? वस्तुओं का उत्पादन किस प्रकार करना है? उत्पादन में किन तकनीकों का प्रयोग करना है? उत्पादन प्रक्रिया में किन कारकों अथवा संशोधनों का तथा किन संयोगों में प्रयोग करना है? उपभोक्ता वस्तुओं के क्रय संबंधी निर्णय किस प्रकार लेते हैं तथा उनके चयन संबंधी निर्णय कीमतों एवं आय में हुए परिवर्तनों से किस प्रकार प्रभावित होते हैं? फर्म कैसे तय करती है कि कितने श्रमिकों को काम पर लगाया जाय और श्रमिक कैसे यह तय करते हैं कि कहाँ उन्हें कार्य करना है और कब तक करना है? दूसरे शब्दों में, अर्थशास्त्र का विषय क्षेत्र राज्य की क्रियाओं के वित्तीयन से बढ़कर आम व्यक्ति के दैनिक जीवन में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने में मदद करने तक पहुँच गया है।

आज अर्थशास्त्र के विषय क्षेत्र में बहुत-सी गतिविधियाँ सम्मिलित हो गयी हैं। इन गतिविधियों में शामिल हैं– (क) उपभोक्ता का व्यवहार या चयन प्रक्रिया; (ख) उत्पादक का व्यवहार अथवा उत्पादन क्रिया का आयोजन एवं संचालन किस प्रकार किया जाता है? (ग) बाज़ार के विविध रूप क्या होते हैं? (घ) विभिन्न व्यक्ति उत्पादन प्रक्रिया में अपने स्वामित्व वाले साधनों द्वारा किस प्रकार अपना योगदान देते हैं? (ङ) विभिन्न प्रकार की कार्य-दक्षताएँ कौन-सी हैं, (च) किन परिस्थितियों में बाज़ार विफल होते हैं और इन परिस्थितियों में बाज़ार अपनी किस भूमिका का निर्वहन कर सकता है?

प्रस्तुत पाठ्यक्रम छात्रों को उक्त सभी मुद्दों से अवगत कराता है। यह पाठ्यक्रम **छह खंडों** में विभक्त है :

अर्थशास्त्र की प्रकृति से परिचय कराते हुए **खंड 1** माँग एवं आपूर्ति के आधारभूत सिद्धांतों से अवगत कराता है। साथ ही, इस बात की भी जानकारी प्रदान कराता है कि माँग एवं आपूर्ति के वक्र किस प्रकार बाज़ार प्रक्रिया का वर्णन करने में प्रयुक्त होते हैं। इस खंड में तीन इकाई हैं। अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय नामक **प्रथम इकाई में**, अर्थशास्त्र की मूलभूत प्रकृति तथा इस विषय में प्रयुक्त आधारभूत संकल्पनाओं एवं विधि को समाहित किया गया है। **इकाई 2 में,** माँग एवं आपूर्ति के सिद्धांत, माँग एवं आपूर्ति की लोच की अवधारणा उसके निर्धारक तथा उसके मापन को बताया गया है। **इकाई** 3 माँग तथा आपूर्ति को साथ लेकर बाज़ार प्रक्रिया की चर्चा करती है।

खंड 2 उपभोक्ता के सिद्धांत से संबंधित है और इसमें दो इकाइयाँ हैं। **इकाई 4** उपयोगिता मापन के गणनात्मक दृष्टिकोण से संबंध रखती है और इस बात का विश्लेषण करती है कि उपभोक्ता किस प्रकार सम-सीमांत उपयोगिता की मदद से संतुलन को प्राप्त करता है? **इकाई 5** में क्रमवाचक दृष्टिकोण के तहत उपभोक्ता व्यवहार का विश्लेषण किया गया है।

खंड 3 में, उत्पादन फलन एवं लागत सिद्धांत का विश्लेषण किया गया है। इसमें तीन इकाइयाँ हैं। **इकाई 6** एक परिवर्ती आगत वाले उत्पादन फलन पर प्रकाश डालती है। **इकाई 7 में** दो एवं इससे अधिक परिवर्ती आगतों वाले उत्पादन फलन की चर्चा की गई है।

इकाई 9 में विभिन्न प्रकार की लागतों को ध्यान में रखते हुए उत्पादन के लागत पक्ष की चर्चा की गई है।

खंड 4 बाज़ार के विभिन्न रूपों जैसे पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता तथा अल्पाधिकार पर प्रकाश डालता है। इस खंड में चार इकाइयाँ हैं। पूर्ण प्रतियोगिता : फर्म एवं उद्योग में संतुलन नामक **नौवीं इकाई** पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए इस बाज़ार के तहत फर्म एवं उद्योग के संतुलन की व्याख्या करती है। **इकाई 10** जिसका शीर्षक एकाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णयन है, के अंतर्गत एकाधिकार बाज़ार के कीमत विभेद की चर्चा की गई है। अल्पकाल एवं दीर्घकाल में एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता के तहत संतुलन की शर्तें, अतिरेक क्षमता का सिद्धांत तथा विभिन्न बाज़ार रूपों की तलना **इकाई 11** में की गई है। अल्पाधिकार के अंतर्गत कीमत एवं उत्पादन का निर्धारण **इकाई 12** में प्रदान किया गया है।

खंड 5 उत्पादन साधनों की कीमत निर्धारण पर प्रकाश डालता है। इसमें तीन इकाइयाँ हैं। वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत की चर्चा करते हुए **इकाई 13** लगान एवं मज़दूरी किस प्रकार निर्धारित होते हैं पर एक विहंगम दृष्टिकोण प्रदान करती है। इसमें ब्याज एवं लाभ के सिद्धांतों की भी संक्षेप में चर्चा की गई है। **इकाई 14** पूर्ण प्रतियोगी एवं अपूर्ण प्रतियोगी श्रम बाज़ार के तहत मज़दूरी निर्धारण में माँग एवं आपूर्ति प्रक्रियाओं से आपका परिचय कराती है। साथ ही श्रम संघों की भूमिका एवं मज़दूरी विभिन्नताओं का विश्लेषण भी इस इकाई में शामिल किया गया है। **इकाई 15** उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि की विशिष्टताएँ एवं लगान के विभिन्न सिद्धांतों पर प्रकाश डालती है।

खंड 6 में आर्थिक क्षेम बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका को शामिल किया गया है। इस खंड में 2 इकाइयाँ हैं– **इकाई 16** छात्रों को पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार के तहत कार्यक्षमताओं के विविध रूपों से परिचय कराती है और साथ ही यह भी स्पष्ट करती है कि पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार की मान्यताओं से दूरी किस प्रकार के परिणाम देती है। **इकाई 17** उन विभिन्न परिस्थितियों की ओर इंगित करती है जहाँ बाज़ार विफल हो जाते हैं और इसी कारण राज्य को अपनी भूमिका का निर्वहन करना होता है।

इकाई 1 अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय

संरचना

1.0 उद्देश्य

1.1 विषय प्रवेश

1.2 दुर्लभता की अवधारणा

1.3 उत्पादन का अर्थ

1.4 अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएँ

- 1.4.1 क्या उत्पादन किया जाए?
- 1.4.2 कैसे उत्पादन किया जाए?
- 1.4.3 किसके लिए उत्पादन किया जाए?
- 1.4.4 संवृद्धि की समस्या
- 1.4.5 सार्वजनिक एवं निजी वस्तुओं के बीच चयन
- 1.4.6 विशेष गुण वस्तुओं के उत्पादन की समस्या

1.5 उत्पादन संभावना वक्र

1.6 संसाधनों का आवंटन : केंद्रीय समस्याओं का समाधान

- 1.6.1 मिश्रित अर्थव्यवस्था में संसाधनों का आवंटन

1.7 आर्थिक कार्यप्रणाली एवं आर्थिक नियम

- 1.7.1 आगमनात्मक एवं निगमनात्मक तर्क
- 1.7.2 संतुलन

1.8 यथार्थमूलक बनाम आदर्शमूलक अर्थशास्त्र

1.9 व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र

1.10 स्टॉक (भण्डार) एवं प्रवाह

1.11 स्थैतिकी एवं गत्यात्मकता

1.12 सार-संक्षेप

1.13 संदर्भ ग्रंथादि

1.14 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

1.15 पाठांत प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप सक्षम होंगे कि :

- समाज की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए संसाधनों की दुर्लभता की समस्या का समाधान कर पाएं;
- अर्थव्यवस्था का अर्थ एवं प्रकृति बता पाएं;
- आर्थिक इकाइयों की अवधारणा का वर्णन कर पाएं;

- उत्पादन संभावना वक्र की अवधारणा पर चर्चा कर पाएं;
- निवेश और उपभोग के बीच संसाधनों के आवंटन और निजी एवं सार्वजनिक वस्तुओं से जुड़े मुद्दे स्पष्ट कर पाएं;
- बाज़ार अर्थव्यवस्था, समाजवादी अर्थव्यवस्था और मिश्रित अर्थव्यवस्था में संसाधन आवंटन के तरीकों की व्याख्या कर पाएं;
- मूलभूत अवधारणाओं और अर्थशास्त्र की कार्यप्रणाली का वर्णन स्पष्ट रूप से कर पाएं;
- आर्थिक नियमों की प्रकृति का विवरण दे पाएं; और
- आर्थिक तर्क के साथ जुड़ी कुछ विश्लेषणात्मक अवधारणाओं को समझा पाएं।

1.1 विषय प्रवेश

हम अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु को परिभाषित करने के साथ अपनी चर्चा शुरू करते हैं।

अर्थशास्त्र की परिभाषा

अर्थशास्त्र को विभिन्न रूप से परिभाषित किया गया है। सैमुएलसन के अनुसार संक्षेप में, अर्थशास्त्र :

- विश्लेषण करता है कि एक समाज की संस्थाएं और प्रौद्योगिकी कीमतों और विभिन्न उपयोगों के बीच संसाधनों के आवंटन को कैसे प्रभावित करती हैं।
- ब्याज दरों और शेयरों की कीमतों सहित वित्तीय बाज़ारों के व्यवहार की पड़ताल करता है।
- आय के वितरण की जाँच करता है और ऐसे तरीके सुझाता है कि गरीबों को अर्थव्यवस्था के प्रदर्शन को नुकसान पहुंचाए बिना मदद मिल सके।
- व्यापार चक्र का अध्ययन करता और यह जांचता है कि बेरोज़गारी और मुद्रास्फीति में उच्चावचन को नियंत्रित करने के लिए मौद्रिक नीति का उपयोग कैसे किया जा सकता है
- देशों के बीच व्यापार के स्वरूप का अध्ययन और व्यापार अवरोधों के प्रभाव का विश्लेषण करता है
- विकासशील देशों में संवृद्धि को देखते हुए संसाधनों के कुशल उपयोग को प्रोत्साहित करने के तरीकों का प्रस्ताव करता है।
- यह पूछता है कि तेज़ी से आर्थिक विकास, संसाधनों का कुशल उपयोग, पूर्ण रोज़गार, कीमत स्थिरता और आय का उचित वितरण आदि के लिए निर्मित सरकारी नीतियों का इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है।

इन सभी परिभाषाओं से एक सांझा विचार चल रहा है कि दुर्लभता जीवन की एक वास्तविकता है और इन दुर्लभ संसाधनों का कुशल उपयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार हम अर्थशास्त्र को एक विज्ञान के रूप में परिभाषित करते हैं जो दुर्लभता से संबंधित है।

इस प्रकार अर्थशास्त्र दुर्लभता की समस्या का सामना कर रही विभिन्न आर्थिक इकाइयों, परिवारों, फर्मों, सरकारों और अर्थव्यवस्था के व्यवहार को पूरी तरह समझाता है।

1.2 दुर्लभता की अवधारणा

दुर्लभता सभी आर्थिक गतिविधियों का मूल कारक है। दुर्लभता की अवधारणा आर्थिक जीवन के दो बुनियादी तथ्यों में यह अभिव्यक्ति पाती है :

क) असीमित आवश्यकताएं या ध्येय

ख) दुर्लभ या सीमित संसाधन

क) असीमित आवश्यकताएं या ध्येय

हर व्यक्ति की कुछ इच्छाएं/आवश्यकताएं होती हैं। प्रायः व्यक्तियों की आवश्यकताओं में अंतर होते हैं। यहां तक कि समय, स्थान और स्थिति में परिवर्तन के साथ ही एक व्यक्ति की आवश्यकताएं भी बदल जाती हैं।

मानव की आवश्यकताएं असीमित होती हैं और उनमें निरंतर वृद्धि होती रहती है। विभिन्न आवश्यकताओं की गहनता में अंतर होते हैं। संसाधनों की सीमित उपलब्धता के कारण ही पहले उच्च वरीयता क्रम की (अर्थात् अधिक गहनतापूर्ण) आवश्यकताओं को पूरा करने के प्रयास होते हैं। उसके बाद भी कुछ संसाधन उपलब्ध होने पर निम्न क्रम की इच्छाओं की पूर्ति की ओर ध्यान दिया जा सकता है।

ख) दुर्लभ या सीमित संसाधन

आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए उन्हें पूरा करने के संसाधनों की ज़रूरत पड़ती है। किंतु आवश्यकताओं की तुलना में संसाधनों की उपलब्धता सीमित रहती है।

किंतु एक सुखद पक्ष भी है : दुर्लभ संसाधनों को वैकल्पिक रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

अतः संसाधनों को विभिन्न प्रयोजनों के बीच एक व्यवस्थित एवं समन्वित रूप से आवंटित किया जाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति और अर्थव्यवस्था (या समाज) को इस आवंटन की एक प्रक्रिया विकसित करनी होती है।

विभिन्न समाज इन मुद्दों को अलग-अलग तरीकों से सुलझाने की कोशिश करते हैं और इसी प्रक्रिया में समाज जिस ताने-बाने को बुन लेता है, उसे हम एक अर्थव्यवस्था कहते हैं। यह अर्थव्यवस्था एक सारगर्भित विचार है। इसमें संसाधनों और आवश्यकताओं के बीच असंतुलन की मौलिक और स्थायी समस्या के समाधान के लिए गढ़ी गयी संस्थाओं, उनके तंत्रों (तथा उनके बीच अंतर्संबंधों की रचना/नियमन करने वाले नियम-विनियम) को हम एक शब्द 'अर्थव्यवस्था' में ही समाहित मान लेते हैं।

मानव ने ऐसी संस्थागत व्यवस्थाओं के कई प्रकार भेद विकसित किए हैं और उन सबके अपने-अपने विशिष्ट लक्षण एवं नाम भी हैं। प्रत्येक व्यवस्था अपने ही ढंग से मौलिक समस्याओं के समाधान की विधियां और प्रविधियां अपनाती है।

एक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का उदाहरण लें। यहां उत्पादन के साधनों पर निजी व्यक्तियों का अधिकार और उत्तराधिकार होता है। विभिन्न आर्थिक निर्णय बाज़ार में वस्तुओं और सेवाओं की बाज़ार कीमतों से प्रेरित होते हैं। व्यक्ति की आय उस द्वारा बाज़ार को प्रदान साधन सेवाओं तथा वहां से प्राप्त उनकी कीमतों पर निर्भर करती है। किंतु, दूसरी ओर एक सटीक रूप से समाजवादी व्यवस्था में सभी उत्पादक साधनों पर सरकार का ही स्वामित्व रहता है। सरकार ही सभी संसाधनों के प्रयोग विषयक निर्णय लेती है।

किंतु एक बात स्पष्ट है– अर्थव्यवस्था की रचना कैसी भी हो, उसे संसाधनों की दुर्लभता और विविधतापूर्ण एवं संवर्धनशील आवश्यकताओं के बीच तालमेल बैठाने की

समस्या को अवश्य सुलझाना पड़ता है। संसाधनों और आवश्यकताओं के संयोजन कई प्रकार किए जा सकते हैं। अर्थव्यवस्था के विकास का स्तर कुछ भी हो, सभी को दुलर्भता की समस्या का सामना अवश्यक करना पड़ता है। अतः उसे दो प्रश्नों पर ध्यान देना पड़ता है :

1) आवश्यकता संतुष्टि के साधनों की उपलब्धता बढ़ाना; और

2) आवश्यकताओं की संतुष्टि का अनुक्रम तैयार करना।

बोध प्रश्न 1

1) आवश्यकताओं के वे दो महत्त्वपूर्ण लक्षण बताइए जो उनकी संख्या को ''अनन्त'' स्वरूप प्रदान कर देते हैं।

.....

.....

.....

2) एक अर्थव्यवस्था किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

3) सही विकल्प का चुनाव करें :

इनमें से किसे 'दुर्लभ' कहा जा सकता है–

क) सड़ी हुई सब्ज़ियों का भंडार

ख) जंगल में निरोपयोगी पौधे

ग) किसी नर्सरी (पौधशाला) में फूलों की संख्या

घ) किसी गंदे कूप में पानी।

1.3 उत्पादन का अर्थ

'उत्पादन' प्रक्रिया का अर्थ विभिन्न आगतों के उस परावर्तन और परिवर्तन से है जो उनकी आवश्यकता संतुष्ट करने की क्षमता में वृद्धि कर देते हों। अतः यह प्रक्रिया प्रकृति द्वारा प्रदान की गई चीज़ों को मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि करने वाली वस्तुओं और सेवाओं में परिवर्तित कर देती है। उन प्रयुक्त चीज़ों को आगत कहते हैं और उनके परिवर्तित/परिमार्जित स्वरूप ही उत्पादन अर्थात् वस्तुएं और सेवाएं हैं। इस कार्य में कुछ शारीरिक और बौद्धिक मानवीय प्रयास की जरूरत होती है। यह परिवर्तन/परिमार्जन भौतिक (आकार-स्वरूप का बदलाव, जिससे संतुष्टि प्रदान करने की क्षमता में सुधार आता है), स्थानिक (किसी दूसरे स्थान पर प्रयोक्ताओं को वह चीज़ें उपलब्ध कराना); या फिर सामयिक (किसी अन्य समय बिंदु पर आज की पैदा हुई चीज़ें सुलभ कराना– यह भंडारण और संरक्षण द्वारा होता है)। यदि किसी वस्तु की आवश्यकता तुष्टि की क्षमता उसमें लगी आगतों की अपेक्षा अधिक हो तो वह वस्तु अवश्य उत्पादन की किसी प्रक्रिया से गुजर कर आयी है। अन्य शब्दों में 'उत्पादन' उपयोगिता वृद्धि का ही दूसरा नाम है।

1.4 अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं

संसाधनों की दुर्लभता के कारण सभी अर्थव्यवस्थाओं के समक्ष कुछ आधारभूत समस्याएं आती हैं। उन्हें अपनी-अपनी सामाजिक आर्थिक रचनाओं की परिधियों में उनका समाधान तलाश करना होता है। ये केंद्रीय समस्याएं हैं :

1.4.1 क्या उत्पादन किया जाए?

किसी भी अर्थव्यवस्था के पास सभी आवश्यक चीजों का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं होते। अतः इसे यह निर्णय करना ही पड़ता है कि क्या उत्पादन करे और क्या नहीं करें। कुछ वस्तुओं का उत्पादन नहीं होने का अर्थ है समाज की उन वस्तुओं को पाने की इच्छा अपूर्ण रह जाएगी। इस प्रकार किन आवश्यकताओं की संतुष्टि की जानी है और किन वस्तुओं-सेवाओं का उत्पादन किया जाना है– ये सभी निर्णय परस्पर संबंधित रहते हैं और इन्हें समन्वित रूप से ही लिया जाता है। इसी को हम संसाधनों का आवंटन कहते हैं। यदि कुछ संसाधन वस्तु X के उत्पादन में लगा दिए जाते हैं तो उनका वह परिमाण निश्चित रूप से Y के उत्पादन के लिए उपलब्ध नहीं रहेगा। ऐसी समस्याओं को हम उत्पादन संभावना वक्र के विचार द्वारा सहज ही समझ सकते हैं। उस अवधारणा पर हम भाग 1.5 में विस्तार से चर्चा करेंगे।

1.4.2 कैसे उत्पादन किया जाए?

यह उत्पादक संसाधनों के विभिन्न वस्तुओं/सेवाओं के उत्पादन के लिए आवंटन की ही समस्या है। अधिक सटीक रूप से, जब अर्थव्यवस्था वस्तु X के उत्पादन का निर्णय लेती है तो उसे यह भी निर्धारित करना होगा कि इसके उत्पादन में कितनी भूमि, कितनी पूँजी और कितने श्रम आदि को लगाया जाएगा। अर्थव्यवस्था के आकार और स्वरूप कुछ भी हों, प्रत्येक उद्योग में विभिन्न संसाधनों के सटीक अनुपातों का निर्धारण करना आवश्यक होता है। यह अनुपात ही उक्त वस्तु के उत्पादन की एक तकनीक कहलाता है। ऐसे पदार्थ हैं जिनके उत्पादन में पूँजी की अपेक्षा श्रम का अधिक प्रयोग होता है। ऐसी उत्पादन तकनीक को हम ''श्रम गहन'' या ''श्रम बहुल'' तकनीक कहते हैं। दूसरी ओर, यदि उत्पादन में पूँजी का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक होता है तो वह पूँजी गहन तकनीक के प्रयोग का उदाहरण होगा।

किसी वस्तु के उत्पादन की तकनीक के चयन के समय उत्पादक को वैकल्पिक आदानों की कीमतों और उत्पादिता पर विचार करना होगा। आमतौर पर वह श्रम और पूँजी के कई संयोजनों का प्रयोग कर सकता है। वह ऐसे संसाधन संयोजन का चुनाव करता है जिसकी लागत न्यूनतम हो और जो उसे अधिकतम उत्पाद प्रदान कर सके।

उसके यह निर्णय इन दो बातों पर निर्भर है :

i) श्रम और पूँजी की सापेक्ष कीमतें; और

ii) इन दो आदानों की सापेक्ष उत्पादन दक्षता।

1.4.3 किसके लिए उत्पादन किया जाए?

समाज में परिवारों एवं व्यक्तियों की बहुत विशाल जनसंख्या होती है। उपभोग्य वस्तुओं और सेवाओं का सारा उत्पादन केवल उन्हीं की आवश्यकताएं पूरी करने के उद्देश्य से किया जाता है। अतः सभी वस्तुएं/सेवाएं उन व्यक्तियों-परिवारों के बीच विभाजित की जानी हैं। यहां समस्या यही है कि प्रत्येक व्यक्ति/परिवार को उन वस्तुओं और सेवाओं की कितनी-कितनी मात्राएं दी जानी चाहिए।

हम इस आवंटन-वितरण के लिए कई प्रकार के सिद्धांतों का प्रयोग कर सकते हैं। यदि अर्थव्यवस्था का गठन बाज़ार के नियमों के अनुरूप किया गया है तो समाज के सदस्यों के आय अंशों का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है :

ऐसी व्यवस्था में सभी संसाधनों पर किसी न किसी व्यक्ति या परिवार का अधिकार होता है। उन संसाधनों की भी किसी सामान्य वस्तु की भांति बिक्री हो सकती है– या उन्हें भाड़े पर लिया जा सकता है। प्रत्येक उत्पादक संसाधन की कीमत का निर्धारण बाज़ार में उसकी मांग और आपूर्ति द्वारा होता है। इसका प्रयोग करने के इच्छुक वस्तु उत्पादक को इसकी कीमत इसके स्वामी को चुकानी पड़ती है। वह संसाधन स्वामी उसकी बाज़ार में आपूर्ति करने या उसे अपने भंडार में ही रखने को स्वतंत्र होता है। इस प्रकार समाज में प्रत्येक व्यक्ति की आय इस बात पर निर्भर करेगी कि वह अपने विभिन्न संसाधनों की कितनी मात्राओं की और किन कीमतों पर बाज़ार में आपूर्ति करता है।

1.4.4 संवृद्धि की समस्या

प्रत्येक अर्थव्यवस्था अधिक आय का सृजन करने के लक्ष्य से अपने पूँजी भंडार को संवर्धित करना चाहती है (क्योंकि यह पूँजी भंडार उसकी 'उत्पादन क्षमता' दर्शाता है)। समाज अपनी सृजित आय के दो प्रयोग कर सकता है : उपभोग (C) तथा बचत (S)। अतः $Y = C + S$ । यह बचत ही समाज में पूँजी के भंडार को बढ़ाने वाले निवेश के लिए वित्त का स्रोत होती है। अतः समस्त आय में से उपभोग के स्तर को सीमित करते हुए बचत के अंश की वृद्धि पर बल दिया जाता है। यह पूँजी निर्माण में सहायक रहता है।

1.4.5 सार्वजनिक एवं निजी वस्तुओं के बीच चयन

1) **निजी पदार्थ** : कुछ ऐसे पदार्थ (वस्तुएं और सेवाएं) होते हैं जिनकी सुलभता को कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रखा जा सकता है। उदाहरण, जो व्यक्ति किसी वस्तु की बाज़ार कीमत चुकाने को तैयार हो, वही उसे पाने का अधिकारी होता है। वस्तु की ऐसी विशेषता, जिसके आधार पर किन्हीं व्यक्तियों को उसके प्रयोग से वर्जित किया जा सकता है, **'बहिष्कृति का नियम'** कहलाती है। अतः जो व्यक्ति वस्तु की कीमत नहीं चुकाना चाहते अथवा नहीं चुका पाते, वे उसके उपभोग/उपयोग से वंचित रह जाते हैं। अतः वस्तु का प्रयोग विभिन्न व्यक्तियों के बीच विभाजित रहता है। कोई भी ऐसी वस्तु जिसकी कीमत निर्धारित हो सकती हो तथा जिसका प्रयोग किन्हीं चुने हुए व्यक्तियों तक सीमित रखा जा सके **निजी पदार्थ** कहलाती है।

2) **सार्वजनिक पदार्थ** : जिन पदार्थों/वस्तुओं की उपलब्धता को चुने हुए व्यक्तियों तक सीमित रख पाना संभव नहीं रहता उन्हें सार्वजनिक या सामाजिक पदार्थ कहा जाता है। इनकी कीमत इतनी नहीं रखी जा सकती कि कुछ व्यक्ति उनके प्रयोग से पूरी तरह वंचित रह जाएं। इस प्रकार इन वस्तुओं में **अविभाज्यता का गुण** आ जाता है। ऐसी सार्वजनिक/सर्वजन सहाय/सेवा का एक अच्छा उदाहरण तो सुरक्षा सेवाएं ही हैं। जब विदेशी आक्रमण से किसी देश की रक्षा की जाती है तो वास्तव में प्रत्येक देशवासी को सुरक्षा प्राप्त होती है।

सीमित संसाधनों वाली अर्थव्यवस्था सभी निजी एवं सार्वजनिक पदार्थों का पर्याप्त परिमाण में उत्पादन नहीं कर सकती। इसे इनके किसी 'अभीष्ट' संयोजन के उत्पादन का प्रयास अवश्य करना चाहिए।

1.4.6 विशेष गुण वस्तुओं के उत्पादन की समस्या

जिन वस्तुओं/सेवाओं का उपभोग समाज के सदस्यों के लिए अत्यंत वांछनीय माना जाता है, उन्हें हम विशेष गुण पदार्थ कहते हैं। इन विशेष गुण पदार्थों की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि इनके उपभोग से न केवल इनका प्रयोगकर्ता लाभान्वित होता है बल्कि उपभोग न करने वालों को भी लाभ पहुँचता है। उदाहरण : यदि कोई

व्यक्ति सुशिक्षित और स्वस्थ है तो इससे पूरे समाज को कुछ न कुछ लाभ अवश्य पहुँचता है। इसी कारण शिक्षा और स्वस्थता को विशेष गुण सेवाएं कहा जाता है और यही वांछनीय माना जाता है कि समाज के सभी सदस्य सुशिक्षित एवं स्वस्थ हों। विशेष गुण पदार्थों का उपभोग सारे समाज को लाभ पहुँचाता है और उसके दक्षता और क्षेम के स्तर का उन्नयन करता है। अतः प्रत्येक समाज को यह निर्णय करना ही होगा कि यह किस सीमा तक ऐसे विशेष गुण पदार्थों का उत्पादन एवं उपभोग करेगा।

बोध प्रश्न 2

1) एक अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं बताइए।

.....

.....

.....

2) पूँजी निर्माण क्या होता है?

.....

.....

.....

3) उत्पादन की तकनीक किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

4) विशेष गुण पदार्थ किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

5) सार्वजनिक और निजी पदार्थों के बीच भेद स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

1.5 उत्पादन संभावना वक्र

अर्थव्यवस्था को विभिन्न वस्तुओं-सेवाओं के वैकल्पिक संयोजनों के बीच किसी एक का चयन करना होता है। इस चयन की समस्या को एक सरल चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। उसे हम **उत्पादन संभावना वक्र** या **उत्पाद-प्रत्यावर्तन वक्र** का नाम देते हैं। सामान्यतः एक उत्पादन संभावना वक्र की रचना इन मान्यताओं के आधार पर की जाती हैः

i) अर्थव्यवस्था केवल दो वस्तुओं– एलईडी बल्ब (L) और कंप्यूटर मॉनीटर (M) के विभिन्न संयोजनों के बीच ही चयन करती है।

ii) अर्थव्यवस्था के उत्पादक संसाधनों का परिमाण पूर्व निश्चित है तथा उपलब्ध तकनीकी ज्ञान का स्तर भी स्थिर है।

iii) समाज के सभी संसाधनों का पूर्ण प्रयोग हो रहा है। कोई बर्बादी या अल्प प्रयोग नहीं हो रहा।

iv) उत्पादक संसाधन दोनों उत्पादों के निर्माण में काम आ सकते हैं। अतः उन्हें एक उद्योग से दूसरे में अंतरित किया जा सकता है। किंतु ऐसे अंतरण से एक उद्योग का उत्पाद घटेगा तथा दूसरे का उत्पादन अधिक हो जाएगा।

v) कोई संसाधन केवल एक उद्योग के लिए उपयोगी और दूसरे के लिए अनुपयोगी नहीं है।

vi) यहां हम संसाधनों की उत्पादन दक्षता को उत्पादों की भौतिक इकाइयों अर्थात् एलईडी बल्बों की संख्या तथा मॉनीटरों की संख्या द्वारा ही इंगित/मापित करते हैं।

इन मान्यताओं के आधार पर हम एक अर्थव्यवस्था के लिए संभावित उत्पादन संयोजनों का एक कृत्रिम उदाहरण तालिका 1.1 में दिखा रहे हैं। तालिका के आंकड़े बता रहे हैं कि यदि अर्थव्यवस्था अपने समस्त संसाधनों का प्रयोग करें तो वह 30 L या फिर 30 M का उत्पादन कर सकती है। वह L और M के इन्हीं सीमाओं के भीतर किसी संयोजन का उत्पादन भी कर सकती है। तालिका 1.1 की उत्पादन संभावनाओं को ही हमने चित्र 1.1 में अंकित किया है। यही हमारा उत्पादन संभावना वक्र (PPC) अथवा उत्पादन संभावना सीमा (PPF) है।

तालिका 1.1 : समाज को सुलभ उत्पादन संभावनाएं

संयोजन संख्या	LED (L)	कंप्यूटर मॉनीटर (M)	एक अतिरिक्त L के उत्पादन पर M की हानि (tones)	एक अतिरिक्त M के उत्पादन हेतु L की हानि
1	30	0	0	**0**
2	25	14	2.8	0.357
3	20	20	1.2	0.833
4	15	24	0.8	1.250
5	10	27	0.6	1.667
6	5	29	0.4	2.500
7	0	30	0.2	5.000

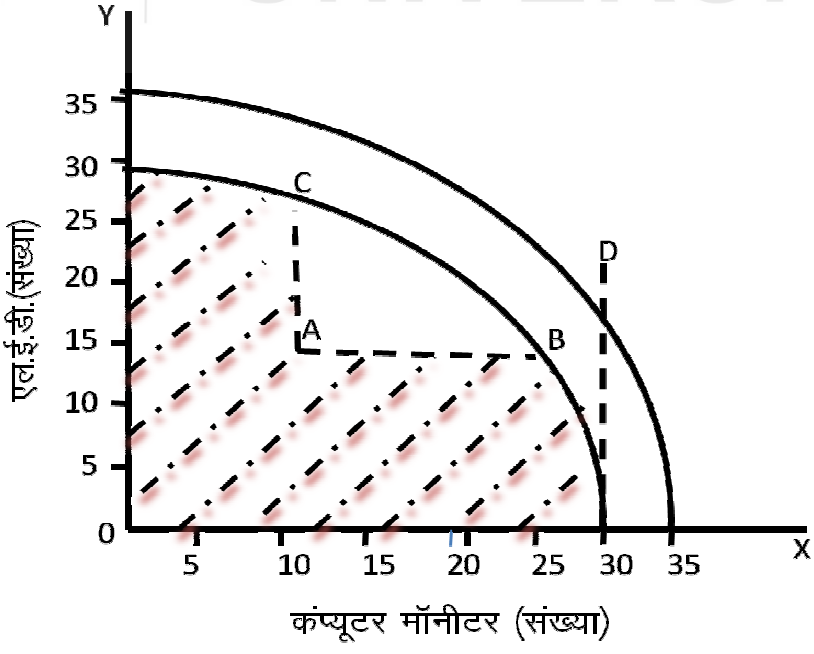

चित्र 1.1

हम यहाँ M की संख्या X-अक्ष पर दिखा रहे हैं और L की संख्या को Y-अक्ष पर दिखाया गया है। दोनों वस्तुओं के उत्पादन युग्मों को अंकित कर उनको जोड़कर बनाया गया वक्र ही उत्पादन संभावना वक्र है। इस प्रकार, हम PPC को उन सभी उत्पादन संयोजनों का समुच्चय मानते हैं जिन्हें समाज अपने सारे उत्पादक संसाधनों का पूर्ण एवं दक्ष प्रयोग करते हुए उत्पादन कर सकता है। अतः PPC वक्र का प्रत्येक बिंदु उन वस्तुओं की अधिकतम मात्राओं के एक संयोजन को दर्शाता है। इसीलिए इस वक्र को हम उत्पादन संभावना सीमा का नाम भी दे सकते हैं। अर्थव्यवस्था वक्र पर किसी भी बिंदु या उसके भीतर के छायांकित क्षेत्र में किसी भी बिंदु पर उत्पादन कर सकती है। उदाहरण के लिए, बिंदु A, B और C उन संयोजनों को दर्शाते हैं जिनका उत्पादन संभव है। ये या तो PPC पर हैं या छायांकित क्षेत्र में। लेकिन ध्यान दें : बिंदु A एक व्यावहारिक उत्पाद संयोजन तो है, किंतु इसे 'दक्ष' बिंदु नहीं माना जा सकता। दूसरी ओर, बिंदु B और C व्यावहारिक भी हैं और दक्ष भी। बिंदु A पर उत्पादन करते समय कुछ उत्पादक संसाधनों का या तो प्रयोग नहीं हो रहा या उनकी बर्बादी हो रही है।

अतः बिंदु A पर ही विचार करें। यहां 10 M तथा 14 L का उत्पादन हो रहा है। किंतु PPC दर्शा रहा है कि इतने M के साथ तो अर्थव्यवस्था 27 L का उत्पादन कर सकती है (बिंदु C)। या फिर 14 L के साथ M का उत्पादन बढ़ाकर 25 तक ले जाना संभव है (बिंदु B)।

PPC से परे (छायांकित क्षेत्र से बाहर) का प्रत्येक बिंदु L तथा M के ऐसे संयोजन दर्शाता है जिन्हें उत्पादित नहीं किया जा सकता। बिंदु D का ही उदाहरण लें; यह 30 M और 20 L का संयोजन दर्शाता है। किंतु 30 M का उत्पादन करने पर तो सारे संसाधनों का उपयोग हो, इसी उद्योग में हो जाता है। L के उत्पादन के लिए कुछ भी नहीं बचता। दूसरी ओर, यदि 20 L का उत्पादन करना ही है तो M का उत्पादन 30 नहीं बल्कि कम मात्रा अर्थात् 20 करना होगा।

उत्पादन संभावना वक्र PPC की विशेषताएं

सामान्यतः एक PPC में दो विशेषताएं होती हैं :

1) **यह बायीं से दाहिनी ओर ढलवां होता है**

इसका अर्थ है कि एक वस्तु की कुछ अधिक इकाइयों का उत्पादन करने के लिए दूसरी वस्तु के उत्पादन की कुछ इकाइयों का त्याग करना होगा (क्योंकि हमारे संसाधन तो सीमित हैं)।

2) **अक्ष केंद्र की ओर अवतल**

अक्ष केंद्र की ओर अवतल वक्र का ढाल वृद्धिमान होता है– यह ढाल ही सीमांत प्रत्यावर्तन दर (MRT) है। वस्तुतः हमारा PPC इसी मान्यता पर आधारित होता है।

क्या PPC एक सरल रेखा हो सकता है?

हाँ, यदि हम यह मानकर चलें कि MRT स्थिर है, अर्थात् ढाल अपरिवर्तित रहता है। यदि ढाल अपरिवर्तित हो तो वक्र एक सरल रेखा बन जाएगा। किंतु क्या MRT स्थिर रहेगा? यह तभी संभव होगा जब सभी संसाधन दोनों वस्तुओं के उत्पादन में एक समान दक्ष हों।

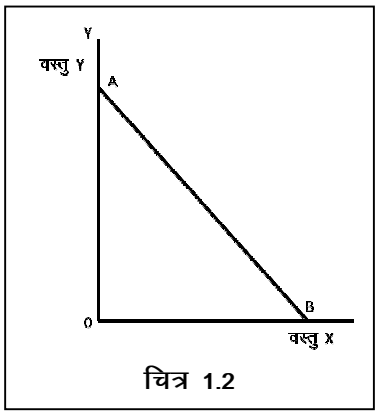

चित्र 1.2

हम सामान्यतः PPC को अक्ष केंद्र की ओर अवतल वक्र का रूप इसलिए देते हैं कि हमें यह मानकर चलना अधिक व्यावहारिक लगता है कि सभी साधन सभी चीज़ों का उत्पादन करने में एक जैसे दक्ष नहीं होते (चित्र 1.2)।

क्या उत्पाद केवल PPC पर ही होता है?

हाँ भी, नहीं भी। यदि सभी संसाधनों का दक्षतापूर्ण प्रयेग किया जाए तो हमारा उत्तर 'हाँ' होगा। किंतु यदि साधन प्रयोग में अदक्षता अथवा अपूर्णता– या दोनों ही उपस्थित हों तो उत्पादन किसी भीतरी बिंदु पर ही हो पाएगा (चित्र 1.3)। बिंदु F या PPC AD के किसी भी बिंदु पर संसाधन दक्षतापूर्वक संपूर्ण रूप से प्रयोग हो रहे हैं। किंतु वक्र से नीचे के U जैसे किसी भी बिंदु पर संसाधनों के प्रयोग में अपूर्णता या अदक्षता या दोनों ही विद्यमान होंगी। अतः PPC से नीचे किसी बिंदु पर उत्पादन समाज की अदक्षता और संसाधनों के प्रयोग में अपूर्णता की ओर संकेत करता है (चित्र 1.3)।

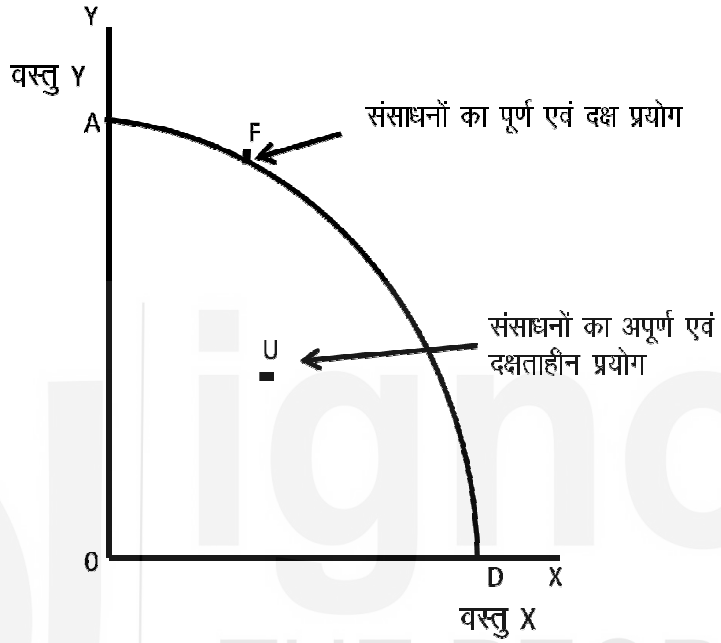

चित्र 1.3

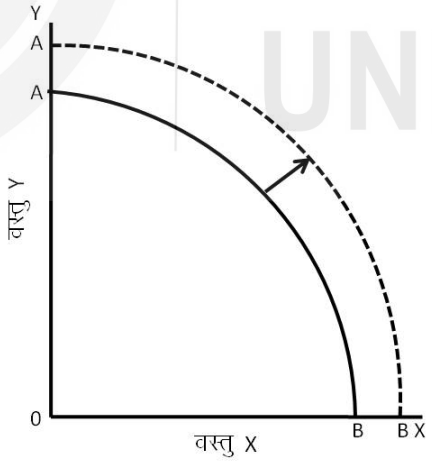

चित्र 1.4

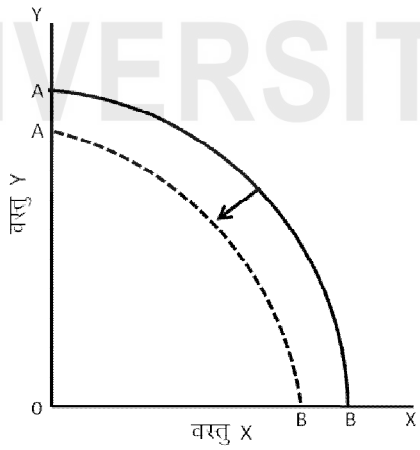

चित्र 1.5

क्या PPC वक्र में खिसकाव हो सकता है?

हाँ, यदि संसाधनों में वृद्धि हो, श्रम और पूँजी में वृद्धि और बेहतर प्रौद्योगिकी का संचार हो। इन सभी के सहारे अर्थव्यवस्था दोनों ही वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने में सफल हो सकती है। हमारी PPC की तो एक आधारिक मान्यता ही संसाधनों का पूर्व निश्चित आकार और प्रौद्योगिक ज्ञान का स्तर अपरिवर्तित रहना थी। यदि संसाधनों में वृद्धि होती है तो वह मान्यता भंग हो जाती है। पुराना PPC मान्य नहीं रहता। नए संसाधन भंडार के साथ तो एक नया PPC बनेगा जो पुराने PPC से बाहर स्थित होगा।

यदि संसाधनों के परिमाण में कमी हो जाए तो PPC भीतर (अक्ष केंद्र) की ओर खिसक जाएगा (प्राकृतिक आपदाएं और युद्ध जैसी घटनाएं जनसंख्या में कमी और पूँजी भंडार के विनाश के माध्यम से ऐसी स्थिति भी उत्पन्न कर सकती है) (चित्र 1.5)।

1.6 संसाधनों का आवंटन : केंद्रीय समस्याओं का समाधान

सैद्धांतिक रूप से दो प्रकार की ही अर्थव्यस्थाएं हैं : पूँजीवादी और समाजवादी। वास्तविक व्यवहार में सभी देशों में ऐसी व्यवस्थाएं अपनाई गईं हैं जो पूँजीवाद एवं समाजवाद का एक मिश्रण लगती हैं।

संसाधन आवंटन की समस्या का समाधान कई विधियों से हो सकता है और प्रत्येक अर्थव्यवस्था अपने चुने हुए उद्देश्यों के अनुरूप इस समाधान का प्रयास करती है।

1.6.1 मिश्रित अर्थव्यवस्था में संसाधनों का आवंटन

एक मिश्रित अर्थव्यवस्था वह है जहां कुछ निर्णय तो बाज़ार की प्रक्रियाएं करती हैं और कुछ सरकारी नियमन या प्रत्यक्ष स्वामित्व के सहारे लिए जाते हैं।

आर्थिक गतिविधियों के कुछ क्षेत्र सरकार या सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सुरक्षित रखे जाते हैं। सरकार उन कार्यों के लिए आवश्यक उत्पादक साधन अधिग्रहीत कर उनका अपनी वरीयताओं के अनुसार प्रयोग करती है। सार्वजनिक क्षेत्र के उत्पादन की रचना, उसके उत्पादन की कीमतों तथा अन्य उपायों का प्रयोग निजी क्षेत्र में उत्पादन हेतु संसाधन आवंटन को प्रभावित करने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। इन उपायों में सम्मिलित हैं– कीमत नियंत्रण, लाइसेंस प्रणाली, कराधान, साहाय्य (subsidies) आदि। साथ ही, सरकार अनेक श्रम-हितकारी उपाय भी लागू करती है। इसी प्रकार के कुछ उपाय देश के पिछड़े क्षेत्रों के विकास हेतु, विशिष्ट दुर्लभताओं (आपूर्ति की कमियों) को दूर करने तथा सारी अर्थव्यवस्था के संतुलित विकास के लिए भी अपनाए जाते हैं।

1.7 आर्थिक कार्यप्रणाली एवं आर्थिक नियम

आर्थिक कार्यप्रणाली तो अर्थशास्त्र के एक वैज्ञानिक स्वरूप का अनुशीलन करती (investigates) है। यह मान्यताओं के स्वरूप, तर्क विधाओं और अर्थ विज्ञान में की गई व्याख्याओं का अनुशीलन करती है। वर्गीकरण, वर्णन, व्याख्या, मापन, पूर्वाकलन, सुझाव और जाँच-आकलन आदि का संबंध आर्थिक कार्यप्रणाली से ही है। आर्थिक कार्यविधि अर्थव्यवस्था विषयक प्रश्नों के अर्थशास्त्रियों द्वारा दिए गए उत्तरों और व्याख्याओं के वर्गीकरण आदि के आधार की समीक्षा करती है। उदाहरण के लिए, प्रायः अर्थशास्त्री मांग एवं आपूर्ति वक्रों के खिसकाव (shifting) के माध्यम से यह व्याख्या करते हैं कि कीमतों में परिवर्तन क्यों हो रहे हैं। अर्थशास्त्र के एक सामाजिक विज्ञान होने के नाते आर्थिक नियम सामाजिक नियमों का एक अंग बन जाते हैं। अल्फ्रेड मार्शल के शब्दों में हमें समाज के सदस्यों के व्यवहार के उस पक्ष को अलग रखना चाहिए जहाँ मनुष्य की संप्रेरणा आर्थिक हो, जहां उन मुख्य संप्रेरणाओं की अभिव्यक्ति किसी मौद्रिक कीमत द्वारा हो सके। इनसे संबंधित कार्य सहज ही आर्थिक गतिविधियां बन जाएंगे। किंतु आर्थिक एवं शेष सामाजिक नियमों के बीच इस प्रकार का विलगाव प्रायः इतना सहज स्पष्ट नहीं होता। कितनी ही बार किसी कार्य के साथ आर्थिक एवं गैर-आर्थिक संप्रेरणाएं एक साथ जुड़ी होती हैं। परिणामस्वरूप ऐसे विशुद्ध आर्थिक नियमों की रचना कर पाना बहुत कठिन हो जाता है जो संपूर्ण वैधता से परिपूर्ण भी हों।

1.7.1 आगमनात्मक एवं निगमनात्मक तर्क

अर्थशास्त्रियों ने अपने नियमों के निरूपण में दो परंपराओं का अनुसरण किया है। एक परंपरा में 'कारण' (इन्हें शर्तें या मान्यताएं भी कहा जाता है) पूर्व निर्दिष्ट होते हैं और सभी आर्थिक इकाइयों से विवेकपूर्ण (तर्कसंगत) व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। यदि

मान्यताओं का अनुपालन हो तो इस परिदृश्य में परिणाम पूर्वाकलनीय ही रहते हैं। मान्यताएं पूरी तरह अविश्वसनीय भी हो सकती हैं या बहुत ही वास्तविकतापूर्ण भी, किंतु उन्हें बहुत ही सटीक रूप से निरूपित किया जाता है। इस प्रकार की तर्कधारा को निगमनात्मक तर्कधारा कहा जाता है। यहां सामान्यीकरणों या नियमों तथा व्यक्तियों की गतिविधियों से तर्कधारा के साथ संगतिपूर्णता की अपेक्षा की जाती है। इसका एक सहज उदाहरण मांग का नियम है, जिसके अनुसार, अन्य बातें पूर्ववत् रहने पर किसी वस्तु की मांग की मात्रा में उसकी कीमत के विलोमार्थी परिवर्तन होते हैं। जब कीमत गिरती है तो मांग की मात्रा अधिक हो जाती है और कीमत में वृद्धि होने पर कम मात्रा की मांग की जाती है।

इसके विपरीत कुछ अर्थशास्त्री एक-दूसरे ही ढंग से आर्थिक नियमों का अन्वेषण करते हैं। काल्पनिक आधार पर कारणों या शर्तों का निरूपण करने के स्थान पर वे विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न आर्थिक इकाइयों द्वारा किए गए व्यवहार की वास्तविक जानकारी एकत्र करते हैं। इसके बाद विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत उनके व्यवहार का 'सामान्यीकरण' किया जाता है। इसे हम आगमनात्मक तर्कधारा का नाम देते हैं। इस विधि का एक बहुचर्चित उदाहरण एंजेल का नियम है। विभिन्न परिवारों के बजट के अध्ययन के आधार पर एजेंल का निष्कर्ष है कि जैसे-जैसे परिवार की आय में वृद्धि होती है, आवश्यकताओं पर उसका व्यय कम होने लगता है और विलासितापूर्ण उपभोग पर व्यय में वृद्धि होती है। अधिकांश व्यवसायी फर्में इसी प्रकार की विश्लेषण विधि को बेहतर समझती हैं।

अर्थशास्त्र में किसी भी अर्थव्यवस्था और उसकी कार्यप्रणाली विषयक हमारी सोच और सूझबूझ को बढ़ाने के लिए हम आगमनात्मक एवं निगमनात्मक दोनों ही तर्कधाराओं का प्रयोग करते हैं।

1.7.2 संतुलन

संतुलन की संकल्पना आर्थिक विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण उपस्कर (tool) है। इसका बहुत प्रयोग होता है। अतः इसे समझ लेना आवश्यक है। प्रायः एक आर्थिक चर (उदाहरण, किसी वस्तु/संसाधन की कीमत) पर अनेक शक्तियों का प्रभाव रहता है– वे उस चर को अपनी-अपनी दिशा की ओर खींचने का प्रयास करती हैं। जब वे शक्तियाँ एक संतुलन को प्राप्त कर लेती हैं, अर्थात् उक्त चर का मान स्थिर हो जाता है तो हम कहते हैं कि वह चर संतुलन की अवस्था में है।

संतुलन की संकल्पना

संतुलन का अर्थ है विश्राम, अर्थात् एक ऐसी अवस्था में पहुँच जाना जहां से दूर होने की कोई प्रेरणा या सुयोग नहीं होता :

- जिस समय विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं पर व्यय से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो रही हो तो हम कहेंगे कि उपभोक्ता संतुलन की स्थिति में है। उसका कोई प्रयास उसकी संतुष्टि के स्तर को सुधार नहीं पाएगा, संभवतः कुछ संतुष्टि की क्षति भले ही हो जाए।

- इसी प्रकार, एक व्यावसायिक फर्म उस समय संतुलन प्राप्त करेगी जब उसका संसाधनों पर व्यय और उत्पादन उसे अधिकतम लाभ प्राप्त करा रहे हों। यदि उसका ध्येय अधिकतम लाभ कमाना है तो इस संतुलन बिंदु से परे हटने पर उसे लाभ में कमी सहन करनी होगी।

- कोई संसाधन स्वामी उस समय संतुलन में होता है जब उसके संसाधन उच्चतम प्रतिप्राप्ति वाले काम में लगे हों और उसकी अपनी आय अधिकतम स्तर पर हो। यहां भी किसी अन्य कार्य की ओर संसाधन की एक भी इकाई को प्रेरित करने से आय में कमी सहन करनी पड़ेगी।

- एक अर्थव्यवस्था उस समय संतुलन में होती है जब उसकी आय (और रोज़गार) के स्तर ऐसे हों जहां सकल मांग और सकल आपूर्ति एकसमान हो जाते हैं।

संतुलन विषयक ये विचार इसलिए महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इन द्वारा इंगित संतुलन कभी प्राप्त होता है। इनका महत्त्व इसी बात में है कि ये उस दिशा की ओर संकेत करते हैं जिसकी ओर आर्थिक गतिविधियां प्रवृत्त होती हैं। प्रायः आर्थिक इकाइयां असंतुलन से संतुलन की ओर अग्रसर होती हैं।

'संतुलन' का निरूपण/विश्लेषण दो स्तरों पर किया जा सकता है :

1) **आंशिक संतुलन** : यहां हम शेष अर्थव्यवस्था से अलग-थलग रहते हुए केवल एक बाज़ार की स्थिति का आकलन करते हैं।

2) **सामान्य या व्यापक संतुलन** : यहां हमारी मान्यता रहती है कि सभी बातें/चर परस्पर निर्भर हैं और हम सभी बाज़ारों में समन्वित रूप से प्राप्त संतुलन पर चर्चा करते हैं।

1.8 यथार्थमूलक बनाम आदर्शमूलक अर्थशास्त्र

यथार्थवादी (positive) अर्थशास्त्र केवल वास्तविकता का निरूपण करने वाले नियमों से जुड़ा है। ये नियम सैद्धांतिक मान्यताओं के माध्यम व्युत्पन्न हो सकते हैं। ये दर्ज किए गए अवलोकित तथ्यों पर भी आधारित हो सकते हैं। ये हमें यही बता पाते हैं कि स्थिति क्या है? इनसे यह नहीं पता चल पाता कि आर्थिक विश्लेषण के परिणाम समाज/व्यक्ति के लिए वांछनीय हैं या नहीं, अथवा क्या इनमें किसी परिवर्तन की आवश्यकता है।

इसके विपरीत आदर्शमूलक (normative) अर्थशास्त्र इसी तथ्य की अनुभूति के साथ कार्य करता है कि अर्थव्यवस्था कभी 'संपूर्ण' नहीं होती। इसके क्रियाकलापों के परिणामों में और सुधार की संभावना बनी रहती है। प्रायः सभी अर्थव्यवस्थाओं में तुरंत ध्यान दिए जाने की गुहार लगाती अनेक समस्याएं विद्यमान होती हैं। इन समस्याओं का नाता कीमतों के परिवर्तनों, रोज़गार, कतिपय आगतों की दुर्लभता, आय एवं धन की अपर्याप्तता आदि से हो सकता है। आदर्शमूलक अर्थशास्त्र में उद्भूत ज्ञात का प्रयोग अर्थव्यवस्था की कार्यप्रणाली को सुधारने में किया जाता है। इस सुधार के लक्ष्य निर्धारित कर उन्हें प्राप्त करने के लिए उपर्युक्त नीतियों की रचना की जाती है। अतः आदर्शमूलक अर्थशास्त्र का संबंध इस बात से है कि अर्थव्यवस्था में क्या कुछ होना चाहिए।

एक यथार्थ-सूचक कथन :
''पैट्रोल की कीमत में वृद्धि से इसकी मांगी गई मात्रा में कमी होती है।''

एक आदर्श सूचक कथन :
''सरकार को पैट्रोल की खपत कम करने के लिए कदम उठाने चाहिए प्रायः आदर्शसूचक कथनों में 'चाहिए' जैसी क्रिया जुड़ी होती है।''

1.9 व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र

उपर्युक्त व्यष्टि और समष्टि शब्द मुख्यतः यह बताते हैं कि विश्लेषण की इकइयों का स्तर कितना विशाल है। एक ओर विश्लेषण किसी एक इकाई के व्यवहार और प्रतिक्रियाओं पर केंद्रित हो सकता है तो दूसरी ओर समस्त अर्थव्यवस्था पर एक साथ विचार किया जा सकता है। इन शब्दों में, व्यष्टि और समष्टि के अंग्रेज़ी समतुल्यों का मूल स्रोत क्रमशः ग्रीक भाषा के शब्द माइक्रोस और मैक्रोस को माना जाता है, जिनका अभिप्राय छोटे तथा बड़े से होता है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र का संबंध अर्थव्यवस्था में विभिन्न इकाइयों के व्यक्तिगत व्यवहार, किसी एक वस्तु की कीमत का निर्धारण, एक उपभोक्ता या एक उत्पादक के व्यवहार आदि से होता है।

इसके विपरीत समष्टि अर्थशास्त्र बड़े विशाल समुच्च्यों या आर्थिक इकाइयों के उन समूहों पर विचार करता है जो समस्त अर्थव्यवस्था व्यापी भी हो सकते हैं। केन्नेथ बॉल्डिंग के शब्दों में **''समष्टि अर्थशास्त्र' विशाल समुच्च्यों और अर्थतंत्र के औसत मानों से संबंधित रहता है, किन्हीं व्यक्ति स्तरीय आंकड़ों से नहीं।''** यहाँ हम चरों और आर्थिक इकाइयों के समूहों, जैसे कि राष्ट्रीय आय, रोज़गार, सामान्य कीमत स्तर, वस्तुओं-सेवाओं के अंतर्क्षेत्रीय प्रवाहों, सकल बचत व निवेश आदि पर विचार करते हैं। **जहाँ एक उद्योग या एक फर्म का व्यवहार व्यष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत रहता है वहीं समष्टि अर्थशास्त्र की विषयवस्तु एक समूचे क्षेत्रक से संबंधित होती है।**

एक उपमान के रूप में चर्चा करें तो समष्टि अर्थशास्त्र हाथी को एक इकाई मानता है किंतु व्यष्टि अर्थशास्त्र में तो दंतकथा के दृष्टिहीन पाँच विद्वानों की भांति उसके शरीर के विभिन्न अंगों पर ही चर्चा करना पर्याप्त रहता है। इस प्रकार के अंग अनुसार विश्लेषण के परिणाम अवश्य अलग-अलग रहते हैं। यदि एक अन्य उपमान की बात करें तो स्टेडियम में बैठा दर्शक व्यक्ति क्रिकेट मैच का समष्टि दृश्य देख पाता है किंतु टेलीविज़न के सामने बैठकर तो एक-एक बॉल का विवरण ही मिल पाता है।

1.10 स्टॉक (भण्डार) एवं प्रवाह

आर्थिक चरों के दो प्रकार होते हैं : (1) स्टॉक, और (2) प्रवाह। **स्टॉक चर का मापन समय की एक इकाई पर उसका मान दिखाता है, किसी समयावधि के दौरान नहीं। दूसरी ओर, प्रवाह चर का मापन किसी अवधि भर के लिए होता है किसी समय बिंदु पर नहीं।** हम अनेक आर्थिक चरों से परिचित हैं जो इनमें से पहले या दूसरे वर्ग में होते हैं। ज़रा मुद्रा की आपूर्ति और धन के परिमाण पर विचार करें। दोनों का संबंध समय बिंदु से होता है। अतः ये स्टॉक सूचक संकल्पनाएं हैं। दूसरी ओर, उत्पादन, बचत, व्यय, आय, विक्रय, क्रय आदि पर ध्यान दें। इन सभी का मापन किसी न किसी अवधि से जुड़ा रहता है। एक फैक्ट्री का उत्पादन एक सप्ताह या महीने की अवधि में मापा जाता है, किसी क्षण भर में नहीं। व्यक्ति की आय किसी समय बिंदु पर नहीं मापते। वह भी किसी अवधि के साथ ही मापित होती है। एक प्रवाह चर का मान समय व्यतीत होने के साथ ही निश्चित रूप या आकार धारण करता है। हाँ, एक और बात का ध्यान रखना चाहिए : प्रायः आर्थिक विश्लेषण में स्टॉक और प्रवाह चरों का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

1.11 स्थैतिकी एवं गत्यात्मकता

आर्थिक विश्लेषण में एक स्थैतिक परिवेश या फिर गत्यात्मक परिवेश का प्रयोग हो सकता है। इन स्थैतिक एवं गत्यात्मक विश्लेषण विधाओं में अनेक प्रकार से भेद किया जा सकता है। एक परिभाषा के अनुसार, स्थैतिकी सिद्धांत में (कारण-प्रभाव) चरों की तिथियाँ नहीं बताई जातीं। बाज़ार के व्यवहार का सामान्य मांग-आपूर्ति प्रतिमान ऐसा ही एक सिद्धांत है। यहां मांग और आपूर्ति अपनी-अपनी कीमतों पर निर्भर रहते हैं और संतुलन की शर्त है कि मांग आपूर्ति के समान होती है। किसी भी चर के लिए किसी समय बिंदु या अवधि की कोई चर्चा नहीं की जाती। इस विचार के अनुसार एक गत्यात्मक प्रतिमान वह होगा जहां चरों की संबद्ध तिथियां दर्शाई गई हों। इस दृष्टि से मांग एवं आपूर्ति प्रतिमान का परिवर्तित गत्यात्मक स्वरूप होगा :

$$D_t = f(P_t)$$

$$S_t = g(P_t)$$

$D_t = S_t$ जहाँ 't' समय की संबद्ध इकाई है।

किंतु कुछ अर्थशास्त्रियों का आग्रह है कि केवल चरों के तिथि मान बताने भर से प्रतिमान गत्यात्मक स्वरूप धारण नहीं कर पाएगा। यहां तो चरों के तिथि संबद्ध होने के साथ-साथ उनके संबंधों में समयांतराल की उपस्थिति भी आवश्यक मानी जाती है। इस कसौटी के अनुसार, एक गत्यात्मक प्रतिमान कुछ इस प्रकार होगा :

$$D_t = f(P_t)$$

$$S_t = g(P_{t-1})$$

$$D_t = S_t$$

यहाँ मांग फलन में समयांतराल नहीं है– 't' अवधि में मांग, D_t अपनी उसी अवधि की कीमत, पर निर्भर करती है। किंतु आपूर्ति फलन में एक अंतराल है। यही प्रतिमान को गत्यात्मक बनाता है। पिछली अवधि (t–1) के कीमत स्तर से प्रभावित होकर ही उत्पादक अपना उत्पादन अधिक या कम करने का विचार करते हैं। ऐसे निर्णय का संपूर्ण प्रभाव अवधि 't' में ही फलीभूत होता है। हाँ, बाज़ार का संतुलन वहीं होगा जहाँ 't' समय में माँग वस्तु की उसी अवधि की आपूर्ति के समान हो।

बोध प्रश्न 3

1) बताएं कि ये कथन सत्य (T) हैं या असत्य (F) :

   i) यथार्थमूलक अर्थशास्त्र का संबंध 'क्या होना चाहिए' से है।

   ii) गुणमूलक अर्थशास्त्र में नीतिगत कदम सुझाने के लिए कुछ 'जीवन मूल्य व्यवस्था' की आवश्यकता रहती है।

   iii) किसी भी आर्थिक समस्या के लिए प्रत्येक अर्थशास्त्री एक ही समाधान सुझाता है।

   iv) यथार्थ सूचक अर्थशास्त्र सदैव वस्तु स्थिति को ही दर्शाता है।

   v) हम सदैव ही व्यष्टि अर्थशास्त्र के निष्कर्षों को समष्टि अर्थशास्त्र में प्रभावी मान सकते हैं।

   vi) मांग और आपूर्ति, दोनों ही स्टॉक चर हैं।

   vii) तुलनात्मक स्थैतिकी में दो संतुलन स्तरों की तुलना की जाती है।

2) प्रथम स्तंभ (क) की मदों का द्वितीय स्तंभ (ख) की मदों के साथ मिलान करें।

स्तंभ 'क'	स्तंभ 'ख'
i) एक फर्म और एक उद्योग का अध्ययन	क) वस्तु विनियम
ii) एक चर का मापन एक समय बिंदु पर होता है	ख) समष्टि अर्थशास्त्र
iii) अर्थव्यवस्था के एक समूचे क्षेत्र का अध्ययन	ग) सीमांत उपयोगिता
iv) एक समयावधि पर मापनीय चर	घ) अन्य बातें स्थिर रहें (Ceteris paribus)
v) किसी वस्तु की आवश्यकता संतुष्ट करने की क्षमता	ङ) प्रवाह चर
vi) एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग से प्राप्त संतुष्टि	च) व्यष्टि अर्थशास्त्र
vii) अन्य बातें स्थिर रहने पर	छ) उपयोगिता
viii) सेबों का अंडों से विनिमय	ज) स्टॉक चर

3) यदि ऐसी नई तकनीक विकसित होती है जो कृषि उत्पादकता में वृद्धि कर देती है तो नई उत्पादन संभावना सीमा वक्र निम्न में से कौन सा होगा?

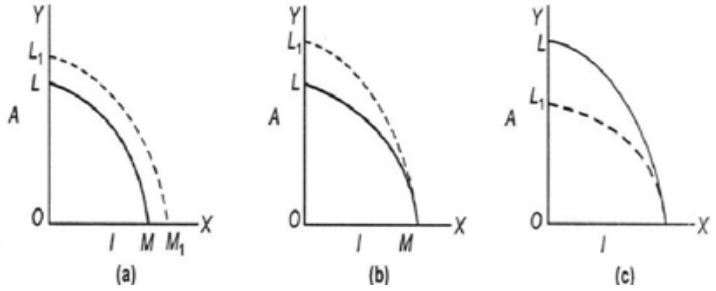

चित्र 1.6

1.12 सार-संक्षेप

अर्थशास्त्र उपभोक्ता, उत्पादक, परिवार, फर्मों, सरकारों तथा देश को दुर्लभता की समस्या का सामना करने संबंधी व्यवहार की व्याख्या करता है। दुर्लभता का अभिप्राय अपरिमित आवश्यकताओं और संसाधनों की सीमित उपलब्धता से है। यह दुर्लभता ही तीन केंद्रीय समस्याओं की जननी है। क्या उत्पादन करें, कैसे उत्पादित करें और किसके लिए उत्पादित करें? इन्हीं समस्याओं से संबद्ध अन्य समस्याएँ हैं : संवृद्धि की समस्या, सार्वजनिक एवं निजी पदार्थों में चयन की समस्या और विशेष गुण पदार्थों के उत्पादन की समस्या। अतः किसी व्यक्ति या समाज की केंद्रीय समस्या यही है कि वैकल्पिक स्पर्धाशील लक्ष्यों की पूर्ति के लिए दुर्लभ संसाधनों का आवंटन किस प्रकार करें। एक उत्पादन संभावना वक्र सीमित संसाधन एवं वर्तमान प्रौद्योगिकी के आधार पर यह दर्शाता है कि एक वस्तु का उत्पादन स्तर निश्चित रख दूसरी का कितना (अधिकतम) उत्पादन किया जा सकता है। यह दर्शाता है कि एक वस्तु का दूसरी में, भौतिक नहीं बल्कि संसाधन प्रयोग के अंतरण द्वारा प्रत्यावर्तन किया जा सकता है।

आर्थिक कार्यविधि अर्थशास्त्र के एक विज्ञान स्वरूप का अन्वेषण करती है। आर्थिक नियम हमें किसी घटनाक्रम की कारणों और प्रभावों के रूप में व्याख्या करने में समर्थ बनाते हैं। आर्थिक नियमों के निरूपण में दो तर्कधाराओं का प्रयोग होता है– आगमनात्मक एवं निगमनात्मक।

'संतुलन' आर्थिक विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण उपस्कर है। जब किसी चर को विभिन्न दिशाओं में खींच रही शक्तियां परस्पर संतुलित हो जाती हैं, उस चर का स्थान अपरिवर्तित रहता है, तो हम उस चर को संतुलन में मानते हैं।

यर्थाथमूलक शब्द आर्थिक विश्लेषण की वह सैद्धांतिक तर्कधारा दर्शाते हैं जहाँ केवल वस्तु स्थिति का वर्णन किया जाता है। इसमें परिणामों की वांछनीयता पर विचार नहीं किया जाता। दूसरी ओर, गुणमूलक अर्थशास्त्र का संबंध ही इस बात से है कि क्या होना चाहिए। यह समाज द्वारा चुने गए लक्ष्यों की दृष्टि से वस्तु स्थिति पर चिंतन कर उन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्यविधियां सुझाता है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र आर्थिक इकाइयों की व्यक्तिगत या छोटे समूहगत आर्थिक गतिविधियों और प्रतिक्रियाओं का अध्ययन कराता है। समष्टि अर्थशास्त्र का संबंध आर्थिक इकाइयों के विशाल समूहों, उनके समुच्चयों और औसतों तथा राष्ट्रीय आय, रोज़गार आदि चरों के साथ होता है।

आर्थिक चरों को हम स्टॉक और प्रवाह के वर्गों में भी विभाजित कर सकते हैं। स्टॉक चर का मापन किसी समयबिंदु पर होता है, जबकि प्रवाह चर किसी अवधि के लिए मापनीय होते हैं। आर्थिक स्थैतिक या तुलनात्मक स्थैतिकी की विश्लेषण तकनीकें अर्थव्यवस्था के प्राचलों का मान पूर्व-निर्धारित मानती हैं। अन्य बातें स्थिर रहने की

मान्यता बनाकर यहां हम प्रारंभिक और अंतिम संतुलन अवस्थाओं की तुलना करते हैं। आर्थिक गत्यात्मिकता में उन प्राचलों के मान भी परिवर्तनीय माने जाते हैं।

1.13 संदर्भ ग्रन्थादि

1) Case, Karl E. and Ray C. Fair, *Principles of Economics*, Pearson Education, New Delhi, 2015.

2) Stiglitz, J.E. and Carl E. Walsh, *Economics*, Viva Books, New Delhi, 2014.

3) Hal R. Varian, *Intermediate Microeconomics: A Modern Approach*, 8th edition, W.W. Norton and Company/Affiliated East-West Press (India), 2010.

1.14 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) अपरिमित, सदैव वृद्धिशील

2) संसाधनों और आवश्यकताओं के बीच एक मौलिक एवं स्थायी असंतुलन की समस्या का समाधान करने के लिए गढ़ी गई संरचना को अर्थव्यवस्था कहते हैं।

3) (ग)

बोध प्रश्न 2

1) अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं हैं – (i) क्या उत्पादन करें; (ii) कैसे उत्पादित करें; (iii) किसके लिए उत्पादन करें; (iv) संवृद्धि की समस्या; (v) सार्वजनिक एवं निजी पदार्थों के बीच चयन की समस्या, और (vi) विशेष गुण पदार्थों के उत्पादन की समस्या।

2) पूँजी के भंडार में वृद्धि ही पूँजी निर्माण है।

3) उत्पादन तकनीक का अर्थ है, वस्तु के उत्पादन में प्रयुक्त आदानों के बीच सटीक अनुपात।

4) विशेष गुण पदार्थों के हितलाभ उनके उपभोक्ताओं के साथ-साथ गैर-उपभोक्ताओं को भी प्राप्त होते हैं।

5) निजी पदार्थों की सुलभता कुछ व्यक्तियों तक सीमित रहती है जबकि सार्वजनिक पदार्थों का सर्वसुलभ माना जाता है।

बोध प्रश्न 3

1) i) असत्य ii) सत्य iii) असत्य

iv) असत्य– यह तभी वस्तु स्थिति दर्शाएगा जब इसकी मान्यताएं विश्वास योग्य/व्यावहारिक हों, अन्यथा यह केवल सही तर्क रहेगा। इसके काम आ सकने वाले निष्कर्ष नहीं निकलेंगे।

v) असत्य vi) असत्य vii) सत्य

2) i) च ii) ज iii) ख iv) ङ v) छ vi) ग vii) घ viii) क

3) b)

1.15 पाठांत प्रश्न

1) एक अर्थव्यवस्था क्या होती है? अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं बताइए।

2) मानवीय आवश्यकताओं के मुख्य लक्षण बताइए।

3) प्रत्येक आर्थिक समस्या के मूल में दुर्लभता ही होती है– व्याख्या करें।

4) उत्पादन के कारक/संसाधन से क्या अभिप्राय है? सभी चारों कारकों की संक्षेप में व्याख्या करें।

5) इन पर लघु टिप्पणियाँ लिखें –

   क) सार्वजनिक पदार्थ और निजी पदार्थ

   ख) विशेष गुण पदार्थ

   ग) मानवीय आवश्यकताएं

6) समझाइए कि अर्थव्यवस्था की मूलभूत समस्याओं के समाधान किस प्रकार परस्पर संबंधित हैं?

7) उत्पादन संभावना वक्र की संकल्पना समझाइए। इसकी मान्यताएं बताइए। एक उदाहरण की सहायता से अपना उत्तर स्पष्ट करें।

8) संक्षेप में समझाइए कि निम्नलिखित अर्थतंत्रों में संसाधन आवंटन कैसे किया जाता है?

   क) बाज़ार व्यवस्था

   ख) समाजवादी अर्थव्यवस्था

   ग) मिश्रित अर्थव्यवस्था

9) कारण बताते हुए स्पष्ट करें कि इनमें से कौन-से कथन सत्य हैं तथा कौन से असत्य–

   क) सभी मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि नहीं हो सकती। यह तो सार्वभौमिक सत्य है। तो फिर उनकी संतुष्टि के गंभीर प्रयास क्यों किए जाते हैं?

   ख) केवल दुबई जैसे संसाधन समृद्ध देश को चयन की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता।

   ग) देश की श्रम शक्ति एवं कार्यशक्ति के बीच का अंतर बेरोज़गारों की संख्या है।

   घ) कोलकाता स्थिति राष्ट्रीय पुस्तकालय एक सार्वजनिक पदार्थ का सटीक उदाहरण है।

   ङ) महानगर टेलीफोन निगम/भारत संचार निगम एक निजी पदार्थ का ही उत्पादन करते हैं।

10) यर्थाथमूलक और गुणमूलक अर्थशास्त्र में भेद करें। किसको वरीयता मिलनी चाहिए? क्यों?

11) इन पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखें –

क) संतुलन की अवधारणा

ख) आर्थिक नियमों की सीमाएं

ग) अन्य बातें स्थिर रहने पर

घ) परिवर्तन पथ को अंकित करना

12) इनमें भेद स्पष्ट करें –

क) व्यष्टि अर्थशास्त्र और समष्टि अर्थशास्त्र

ख) स्थैतिक और गत्यात्मक अर्थशास्त्र

13) वे कारण बताइए जो प्रायः सभी आधुनिक अर्थव्यवस्थाओं को गत्यात्मक बना देते हैं।

14) एक उपभोक्ता, उत्पादक, निवेशक और एक उत्पादक संसाधन के समक्ष अवसर लागतें क्या स्वरूप धारण करती हैं?

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 मांग एवं आपूर्ति विश्लेषण

संरचना

2.0 उद्देश्य

2.1 विषय प्रवेश

2.2 मांग की प्रकृति

2.3 मांग के निर्धारक
- 2.3.1 उपभोक्ता की मांग के निर्धारक
- 2.3.2 बाज़ार की मांग के निर्धारक

2.4 मांग का नियम
- 2.4.1 मांग अनुसूची
- 2.4.2 मांग वक्र
- 2.4.3 मांग के नियम का स्पष्टीकरण : मांग वक्र दाहिनी ओर ढलवां क्यों होता है?

2.5 मांगी गई मात्रा में परिवर्तन बनाम मांग में परिवर्तन

2.6 आपूर्ति की अवधारणा

2.7 आपूर्ति का नियम
- 2.7.1 आपूर्ति फलन
- 2.7.2 आपूर्ति तालिका
- 2.7.3 आपूर्ति वक्र
- 2.7.4 आपूर्ति के नियम के अपवाद

2.8 आपूर्ति में परिवर्तन बनाम आपूर्ति की मात्रा में परिवर्तन
- 2.8.1 आपूर्ति की मात्रा में परिवर्तन
- 2.8.2 आपूर्ति में परिवर्तन
- 2.8.3 आपूर्ति वक्र विस्थापित क्यों होता है?

2.9 लोच का विचार
- 2.9.1 मांग की लोच
- 2.9.2 आपूर्ति की लोच

2.10 मांग की कीमत लोच का मापन

2.11 मांग की कीमत लोच के निर्धारक तत्व

2.12 आपूर्ति की लोच के निर्धारक

2.13 सार-संक्षेप

2.14 संदर्भ ग्रंथादि

2.15 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

2.16 पाठांत प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप सक्षम होंगे कि

- आवश्यकता और माँग में भेद कर सकें;
- मांग तालिका और मांग वक्र का प्रयोग कर मांग का नियम समझा सकें;
- एक ही मांग वक्र पर चलन तथा समूचे माँग वक्र के विचलन में अंतर स्पष्ट कर सकें;
- आपूर्ति की संकल्पना और उसके निर्धारकों का वर्णन कर सकें;
- मांग एवं आपूर्ति की लोच की संकल्पनाओं और उनके मापन की विभिन्न विधियों पर चर्चा कर सकें; और
- मांग एवं आपूर्ति की लोच का महत्त्व समझाते हुए उनके निर्धारकों की व्याख्या कर सकें।

2.1 विषय प्रवेश

मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि कर पाना ही किसी भी अर्थव्यवस्था की सभी उत्पादक गतिविधियों का मूल ध्येय और लक्ष्य होता है। हमने इकाई 1 में यह समझ लिया है कि मानवीय आवश्यकताएँ अपरिमित होती है, और उनकी बार-बार पुनरावृत्ति होती रहती है। किंतु उनकी संतुष्टि के लिए उपलब्ध साधन सीमित या दुर्लभ होते हैं। अतः एक विवेकशील उपभोक्ता को उपलब्ध संसाधनों का अभीष्टतम प्रयोग करना होगा। मांग और आपूर्ति का विश्लेषण उस प्राधार की रचना करता है जिसमें ये निर्णय किए जाते हैं। अतः हम प्रस्तुत इकाई में मांग एवं आपूर्ति विश्लेषण के सिद्धांतों से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करेंगे।

2.2 मांग की प्रकृति

माँग की गई मात्रा के विषय में तीन बातों पर सदा ध्यान रखना चाहिए। **प्रथम,** मांग की मात्रा वह मात्रा है जिसे उपभोक्ता खरीदना चाहता है – यह आवश्यक नहीं कि वह इस मात्रा को खरीद पाने में सफल भी हो। अतः मांगी गई मात्रा खरीदारी की इच्छा है और खरीदी गई मात्रा को वास्तविक खरीदारी कहते हैं।

दूसरे, मांगी गई मात्रा एक प्रवाह चर है– यह प्रति इकाई समय के अनुसार, किसी अवधि के लिए मापी जाती है। यदि हम कहें कि संतरों की मांग 10 इकाई है तो हमारा अभिप्रायः 10 संतरे प्रतिदिन या प्रति सप्ताह से ही होगा।

तीसरे, मांगी गई मात्रा तभी आर्थिक दृष्टि से सार्थक होती है जब उससे जुड़ी कीमत भी बताई गई हो। दूसरे शब्दों में, 10 इकाई संतरे प्रति सप्ताह की मांग को सार्थक होने के लिए उनकी प्रति इकाई कीमत स्पष्ट करना भी आवश्यक है। अधिक स्पष्ट शब्दों में, रु.100/– प्रति दर्जन कीमत पर 10 संतरे प्रति सप्ताह की मांग एक सार्थक आर्थिक कथन होगा। व्यष्टि अर्थशास्त्र में हम इसी रूप में मांग का विचार प्रस्तुत करते हैं।

2.3 मांग के निर्धारक

किसी भी वस्तु की मांग अनेक कारकों द्वारा निर्धारित होती है। आइए, उन पर कुछ विस्तार से चर्चा करें।

2.3.1 उपभोक्ता की मांग के निर्धारक

एक उपभोक्ता द्वारा किसी वस्तु की मांग की मात्रा कई कारकों पर निर्भर करती है। ये इस प्रकार हैं –

i) संबद्ध वस्तु की कीमत;

ii) अन्य संबंधित वस्तुओं की कीमतें;

iii) उपभोक्ता की आय; और

iv) उपभोक्ता की अभिरुचियाँ

माँग फलन यह दर्शाता है कि वस्तु की मांगी गई मात्रा इन कारकों पर किस प्रकार से निर्भर करती है। हम एक मांग फलन इस प्रकार लिख सकते हैं :

$D_x = f (P_x, P_y, P_z, M, T)$ जहाँ D_x द्वारा वस्तु X की मांगी जा रही मात्रा, P_x द्वारा उसकी कीमत, P_y द्वारा उसके प्रतिस्थापक की कीमत, P_z द्वारा उसके किसी संपूरक की कीमत, M द्वारा उपभोक्ता की आय तथा T द्वारा उसकी अभिरुचियाँ दर्शाई गई हैं।

यदि किसी वस्तु की मांग को प्रभावित करने वाले सभी कारकों में एक साथ परिवर्तन हों तो उनके प्रभाव का स्पष्ट पृथक्-पृथक् आकलन-निरूपण बहुत ही जटिल कार्य बन जाता है। इस समस्या का निपटान करने के लिए हम एक बार में केवल एक कारक में परिवर्तन की कल्पना करते हैं और यह मान्यता बनाते हैं कि इस समय शेष सभी कारक अपरिवर्तित रहेंगे। यही अर्थशास्त्रियों की जानी-मानी *''अन्य बातें स्थिर या पूर्ववत्''* रहने की मान्यता है।

माँग संबंध : किसी वस्तु की मांग की मात्रा के उसके विभिन्न निर्धारकों के साथ संबंध इस प्रकार हैं :

1) **वस्तु की अपनी कीमत** : वस्तु की कीमत का उपभोक्ता द्वारा उसकी मांग गई मात्रा पर बहुत गहरा प्रभाव रहता है। सामान्यतः यदि कीमत अधिक हो तो मांगी गई मात्रा कम रहती है। हम ''मांग का नियम'' नामक इस संकल्पना पर आगे विस्तार से चर्चा करेंगे। मांग का नियम सदैव इस मान्यता के आधार पर वर्णित होता है कि मांग को प्रभावित करने वाले शेष सभी कारकों का मान अपरिवर्तित रहता है।

2) **उपभोक्ता की आय का आकार** : उपभोक्ता की आय का भी उसकी मांग पर प्रभाव रहता है। जब उपभोक्ता की आय में वृद्धि होने से किसी वस्तु की मांग में वृद्धि होती है तो हम उस वस्तु को ही 'सामान्य वस्तु' की संज्ञा दे देते हैं। इसके विपरीत स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है– आय में वृद्धि के कारण मांग में कमी होने पर हम उस वस्तु को ही 'निकृष्ट वस्तु' कह देते हैं।

3) **अन्य वस्तुओं की कीमतें** : किसी वस्तु की मांग की मात्रा पर अन्य वस्तुओं की कीमतों का भी गहरा प्रभाव रहता है।

> ***संपूरक वस्तुएँ*** उन्हें कहते हैं जिनकी उपयोगिता दोनों वस्तुओं की एक साथ सुलभता पर निर्भर करती है। अतः वस्तु की माँग का संपूरक की कीमत के साथ विलोम संबंध होता है।
>
> ***प्रतिस्थापक वस्तुएँ*** उन्हें कहते हैं जिनका प्रयोग किसी वस्तु के स्थान पर आसानी से हो सकता है। इसीलिए किसी वस्तु की माँग का उसके प्रतिस्थापक की कीमत से प्रत्यक्ष संबंध होगा।

कुछ मामलों में अन्य वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होने पर किसी वस्तु की मांग में वृद्धि होती है तो किसी वस्तु की मांग में कमी। यह पहली प्रकार की वस्तु एक प्रतिस्थापक है और दूसरी प्रकार की वस्तु संपूरक है। चाय और कॉफी

प्रतिस्थापक होते हैं तो कार और पैट्रोल या पैन और स्याही को संपूरक कहा जा सकता है।

4) **उपभोक्ता की अभिरुचियां** भी उसकी मांग को प्रभावित करती है। यदि उसे कोई वस्तु रुचिकर लगने लगे तो वह उस वस्तु का अधिक उपभोग करने लगता है। इसी प्रकार, यदि उसे किसी वस्तु से अरुचि होने लगती है तो वह उसका उपभोग भी कम कर देगा। ये अभिरुचि परिवर्तन वर्ष के महीनों से भी जुड़े हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, गर्मी में आप शीतल पेय का अधिक उपभोग कर सकते हैं। जबकि शीतकाल में तो हमारी वरीयता चाय और कॉफी जैसे गर्म पेय पदार्थों की हो जाती है।

2.3.2 बाज़ार की मांग के निर्धारक

वैसे तो एक व्यक्ति की मांग के निर्धारक बाज़ार मांग के निर्धारक भी होते हैं, किंतु बाज़ार के संदर्भ में कुछ अन्य कारकों को भी महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इनमें से ये दो प्रमुख हैं :

1) **जनसंख्या का आकार** : अन्य कारक अपरिवर्तित रहते हुए यदि जनसंख्या अधिक होगी तो मांग की मात्रा भी अधिक होगी। यह जनसंख्या का आकार स्वयं अनेक कारकों पर निर्भर होता है।

2) **आय का वितरण** : यह जरा कठिन संकल्पना है। सीधे शब्दों में, यह राष्ट्रीय आय (देश के घटकों की वर्षभर की साधन आय का योग) के धनिकों एवं निर्धन वर्गों के बीच विभाजन का मामला है।

मांग फलन का सटीक रूप से निर्देशन करना उस संबंध के सटीक आकलन एवं प्रक्षेपण के लिए आवश्यक हैं।

बोध प्रश्न 1

1) किसी वस्तु की आवश्यकता और उसकी मांग के बीच का भेद स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

2) एक उपभोक्ता की मांग की मात्रा के निर्धारक कारक कौन-से हैं?

.....

.....

.....

3) किसी वस्तु की बाज़ार मांग को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

2.4 मांग का नियम

अन्य सभी प्रभावकारी कारकों के अपरिवर्तित रहते हुए किसी वस्तु की कीमत और उसकी मांग की मात्रा के बीच विलोम संबंध को मांग का नियम कहते हैं। यह दाहिनी ओर ढलवां मांग वक्र प्रदान करता है। इस विचार को हम एक मांग तालिका (जो विभिन्न कीमतों पर मांगी गई मात्राओं का ब्यौरा देती है) द्वारा दर्शा सकते हैं। इसी

तालिका की जानकारी को द्वि-अक्षीय चित्र के रूप में अंकित करने पर हमें मांग वक्र प्राप्त होता है।

2.4.1 मांग अनुसूची

यहां हम कुछ काल्पनिक आंकड़ों का प्रयोग कर मांग के नियम को स्पष्ट कर रहे हैं। तालिका 2.1 मांग के नियम का एक अनुप्रयोग दिखा रही है, इसी को मांग अनुसूची कहते हैं।

तालिका 2.1 : उपभोक्ता की सेब की मांग अनुसूची

सेब की कीमत, प्रति किलोग्राम (रुपयों में)	सेब की मांगी गई मात्रा (प्रति सप्ताह किलोग्राम में)
100	15
200	12
300	8
400	3

इस तालिका 2.1 में हमने चार ही कीमत-मात्रा संयोजन दिखाए हैं। यदि इस तालिका पर ध्यान दें तो सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि कीमत में वृद्धि होने पर उपभोक्ता द्वारा सेब की मांगी गई मात्रा में कमी आ रही है। अतः हमारे चुने हुए आंकड़े मांग के नियम के लागू होने का संकेत प्रदान करते हैं।

2.4.2 मांग वक्र

मांग वक्र विभिन्न कीमतों पर उपभोक्ता की किसी वस्तु की निश्चित मात्राओं की खरीदारी की तत्परता के संबंध को चित्रांकित करती है। आइए, चित्र 2.1 के माध्यम से मांग वक्र को समझने का प्रयास करें। यह Y-अक्ष पर रुपयों में सेब की कीमत तथा X-अक्ष पर किलोग्राम में उसकी प्रति सप्ताह मांगी गई मात्रा दर्शायी गई है। तालिका 2.1 का पहला संयोजन बिंदु 'a' द्वारा दिखाया गया है जहां उपभोक्ता रु. 100/– प्रति किलोग्राम की दर से 15 किलोग्राम सेब की मांग करता है। इसी प्रकार बिंदु b, c, d क्रमशः रु. 200/– पर 12 किलोग्राम, रु. 300/– पर 8 किलोग्राम तथा रु. 400/– पर 3 किलोग्राम की मांग दर्शा रहे हैं। इन बिंदुओं a, b, c, d को मिलाकर बनी रेखा ही मांग वक्र है। अतः DD हमारा मांग वक्र है।

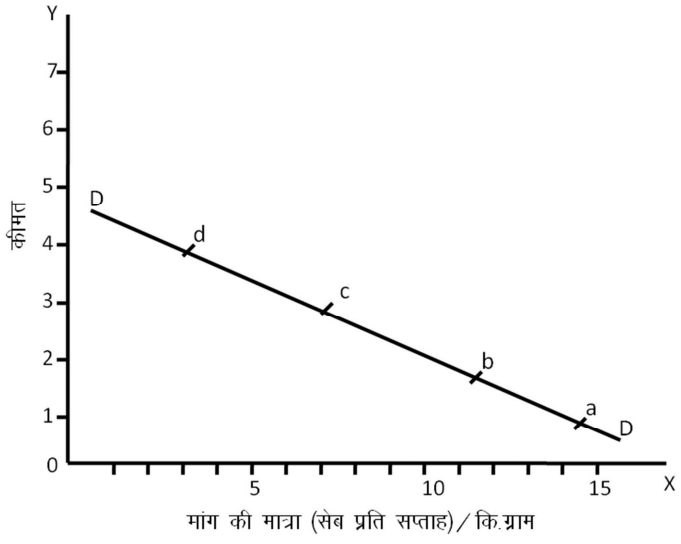

चित्र 2.1

मांग वक्र की सबसे बड़ी विशेषता इसका बायीं से दाहिनी ओर ढाल है। हमारे चित्र 2.1 में बना मांग वक्र एक सरल रेखा है किंतु इसका सदैव सरल रेखा होना अनिवार्य नहीं है। यह चित्र 2.2 में दर्शाया गया वक्रीय रूप भी धारण कर सकता है।

मांग वक्र का सरल रेखीय या वक्रीय स्वरूप इस बात पर निर्भर है कि कीमत वृद्धि पर मांग की मात्रा में कमी (या कीमत कम होने पर मांग की मात्रा में वृद्धि) कितनी होती है। बात चाहे चित्र 2.2 की हो या 2.3 की – दोनों ही मांग के नियम के लागू होने की बात दिखा रहे हैं।

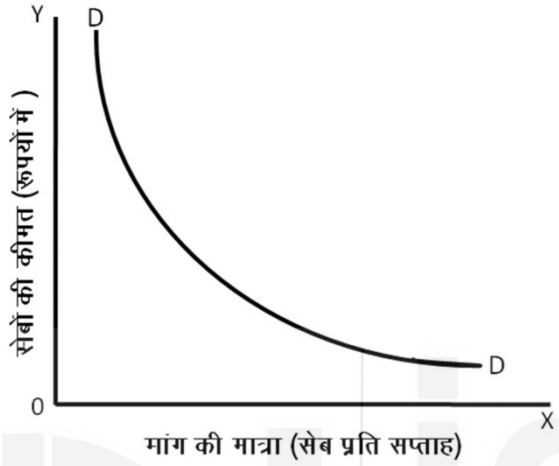

चित्र 2.2

1) दो परिवारों की आइसक्रीम की मांग अनुसूचियाँ नीचे दिखाई गई हैं। यदि बाज़ार में आइसक्रीम के यही दो खरीदार हों तो बाज़ार मांग अनुसूची बनाएं।

तालिका 2.2

कीमत (रु.)	मांग की मात्रा	
	परिवार 'क'	परिवार 'ख'
3	4	5
4	3	4
5	2	3
6	1	2

कीमत (रु.)	मांग की मात्रा			बाज़ार मांग
	परिवार 'क'		परिवार 'ख'	
3	4	+	5	=9
4	3	+	4	=7
5	2	+	3	=5
6	1	+	2	=3

बाज़ार मांग वैयक्तिक मांग वक्रों का क्षैतिज योग ही है।

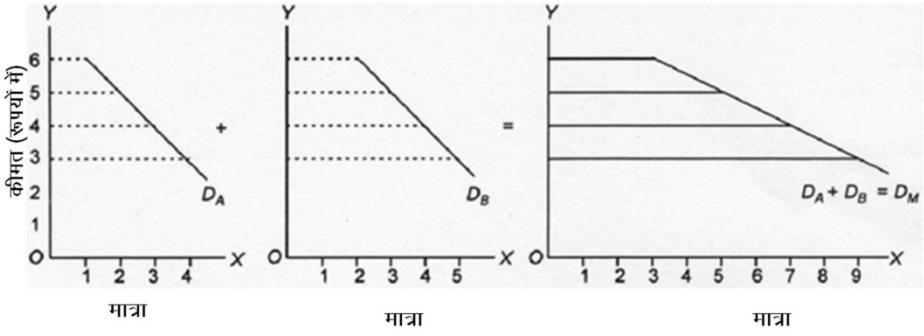

चित्र 2.3

2.4.3 मांग के नियम का स्पष्टीकरण : मांग वक्र दाहिनी ओर ढलवां क्यों होता है?

मांग के नियमानुसार किसी वस्तु की कीमत और उसकी मांग की मात्रा में विलोम संबंध होता है। परंपरागत रूप से इस संबंध को गणना या परिमाणवाची उपयोगिता विश्लेषण के माध्यम से समझाया जाता है। आधुनिक मांग का सिद्धांत इन तीन संकल्पनाओं का प्रयोग करता है :

1) **प्रतिस्थापन प्रभाव**

प्रतिस्थापन की संभावना वस्तुओं की सापेक्ष कीमतों में परिवर्तनों के कारण उत्पन्न होती है। मान लें कि पेप्सी और कोक, दोनों के टिन कैन रु. 20/– प्रति इकाई बिक रहे हैं। यदि कोक की कीमत बढ़ाकर रु. 25/– कर दी जाए तो पेप्सी अपेक्षाकृत सस्ता प्रतीत होगा। यहां पेप्सी की कीमत में कमी नहीं आयी है किंतु कोक के महंगे होने के कारण यह सस्ता प्रतीत होने लगा है। यह सापेक्ष कीमत परिवर्तन ही प्रतिस्थापन प्रभाव को जन्म देता है।

यदि अन्य फलों की कीमतें स्थिर रहें और आम सस्ते हो जाएं तो उपभोक्ता आम की ही अधिक मात्रा खरीदने लगता है। इसका कारण यही है कि उसे अब आम सस्ते मिल रहे हैं। हम यह भी कह सकते हैं कि अब उपभोक्ता अन्य फलों के स्थान पर आम का उपभोग करने लगा है। यही 'प्रतिस्थापन प्रभाव' है। यही आम की कीमत कम होने पर आम की अधिक खरीदारी का मुख्य कारण है– शर्त यही है कि अन्य फलों की कीमतें स्थिर रहें।

2) **आय प्रभाव**

हम मान चुके हैं कि उपभोक्ता की मौद्रिक आय का स्तर स्थिर है। अतः आम की कीमत कम होने के फलस्वरूप उसकी वास्तविक आय में वृद्धि हो जाएगी। वह अपनी पूर्ववत् आय की राशि में अधिक आम खरीद पाने में समर्थ हो जाएगा। इस कारण भी आम की मांग में वृद्धि होने लगेगी।

कीमत में कमी के फलस्वरूप वास्तविक आय में इस वृद्धि के कारण वस्तु की मांग की वृद्धि को **आय प्रभाव** कहते हैं। यदि हमारे उपभोक्ता की मौद्रिक आय में वृद्धि होती तो उसका भी वस्तु की मांगी गई मात्रा पर वास्तविक आय में वृद्धि जैसा ही प्रभाव होता। मौद्रिक या वास्तविक आय की वृद्धि पर जिन वस्तुओं की मांग की मात्रा में वृद्धि होती है उन्हें हम 'सामान्य पदार्थ' कहते हैं। ऐसा आय प्रभाव भी **धनात्मक आय प्रभाव** कहलाता है। यह धनात्मक इसलिए है कि हमें आय की वृद्धि और मांग की मात्रा के बीच एक प्रत्यक्ष संबंध दिखाई दे रहा है। यदि मौद्रिक या वास्तविक आय की वृद्धि के कारण मांग की मात्रा कम हो जाती हो तो हम उसे **'ऋणात्मक आय प्रभाव'** कहेंगे। इस ऋणात्मक आय प्रभाव का संबंध निकृष्ट पदार्थों' से रहता है। हम एक नामचीनता रहित कार्डीगन को किसी नामचीन कार्डीगन की अपेक्षा निकृष्ट कह सकते हैं।

3) **कीमत प्रभाव**

कीमत प्रभाव को हम प्रतिस्थापन प्रभाव और आय प्रभाव का मिला-जुला स्वरूप मानते हैं।

$$PE = SE + IE$$

जहाँ, PE = कीमत प्रभाव,

SE = प्रतिस्थापन प्रभाव, और

IE = आय प्रभाव

यह ध्यान रहे कि प्रतिस्थापन और आय प्रभाव एक के बाद दूसरे क्रम पर कार्य नहीं करते। वास्तव में, जब कीमत में परिवर्तन होता है तो ये दोनों प्रभाव एक साथ ही क्रियाशील होकर हमें कीमत प्रभाव प्रदान करते हैं। हम तीन परिदृश्यों की कल्पना कर सकते हैं :

1) प्रतिस्थापन प्रभाव सदैव इस प्रकार कार्य करता है कि किसी वस्तु की कीमत में कमी होने पर उसकी मांग की मात्रा में वृद्धि होती है। यदि हम इसी के साथ आय प्रभाव का भी आकलन करें तथा वह धनात्मक हो तो मांग का नियम निश्चित रूप से व्यावहारिक होगा।

2) किंतु यदि उक्त प्रतिस्थापन प्रभाव के साथ मिलने वाला आय प्रभाव ऋणात्मक हो (वस्तु एक निकृष्ट पदार्थ हो) तो मांग का नियम लागू होने के लिए यह अनिवार्य हो जाएगा कि प्रतिस्थापन प्रभाव ऋणात्मक आय प्रभाव से अधिक प्रबल हो।

3) किंतु यदि उक्त प्रतिस्थापन प्रभाव ऋणात्मक आय प्रभाव की अपेक्षा क्षीण हो तो मांग का नियम लागू नहीं हो पाएगा।

गिफ्फन पदार्थ

जहां ऋणात्मक आय प्रभाव प्रतिस्थापन प्रभाव पर भारी पड़ता है उन वस्तुओं को हम इस विरोधाभास को स्पष्ट करने वाले रॉबर्ट गिफ्फन के नाम पर ही 'गिफ्फन पदार्थ' कहते हैं। ऐसे पदार्थों की कीमत कम होने पर उनकी मांग में वृद्धि अनिवार्य नहीं होती। वास्तव में, कीमत में कमी के कारण वस्तु की मांग की मात्रा कम भी हो सकती है।

2.5 मांगी गई मात्रा में परिवर्तन बनाम मांग में परिवर्तन

वस्तु की कीमत में परिवर्तन के कारण उसकी मांगी जा रही मात्रा में परिवर्तन होता है। दूसरी ओर, वस्तु की कीमत के अतिरिक्त अन्य कारकों के प्रभाव से वस्तु की मांग में बदलाव को हम 'मांग में परिवर्तन' का नाम देते हैं।

मांग का प्रसार और संकुचन

वस्तु की मांग में परिवर्तन प्रसार या संकुचन का रूप ले सकता है। वस्तु की कीमत में कमी के फलस्वरूप मांग की मात्रा में वृद्धि को ही हम मांग का प्रसार कहते हैं। इसके विपरीत कीमत में वृद्धि से मांग में संकुचन (कमी) दिखाई देता है।

हम चित्र 2.4 में इन प्रसार एवं संकुचन की क्रियाओं को एक मांग वक्र पर ही दाहिनी तथा बायीं ओर खिसकाव द्वारा दिखा रहे हैं।

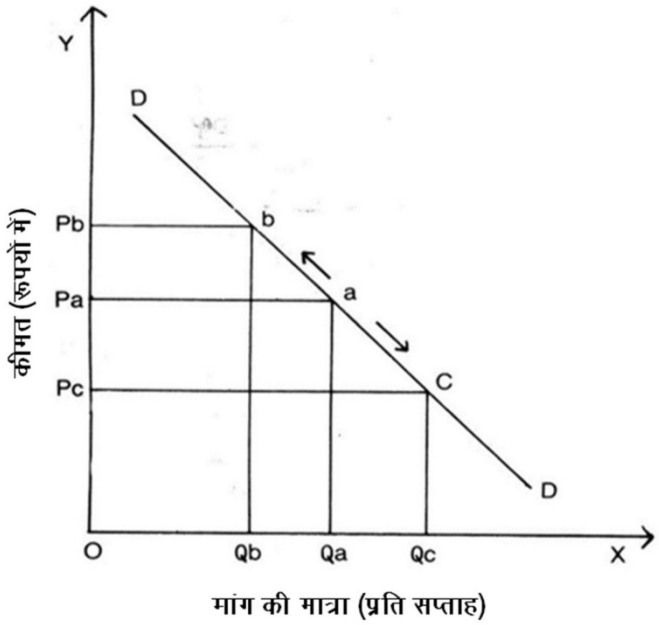

चित्र 2.4

यहां भी हम X-अक्ष पर मात्रा तथा Y-अक्ष पर रुपयों में कीमत दिखा रहे हैं। DD हमारा मांग वक्र है। इस वक्र पर बिंदु 'a' पर वस्तु की कीमत पर OQ_a मात्रा की मांग होती है। जैसे ही कीमत गिर कर OP_c होती है– मांग की मात्रा भी OQ_c हो जाती है। बिंदु 'a' से 'c' की ओर यह चलन 'मांग का प्रसार' दिखा रहा है। ध्यान दें कि इसी को सूचित करने के लिए a से c की ओर चलन को एक तीर द्वारा भी दर्शाया गया है। इसी तरह कीमत की वृद्धि के बाद उसके OP_b होने पर मांगी गई मात्रा कम होकर OQ_b रह जाती है। मांग वक्र DD पर इसे हम a से b की ओर चलन द्वारा दिखा रहे है– यही मांग का संकुचन है।

मांग में परिवर्तन

मांग में परिवर्तन उस स्थिति को कहते हैं जब मांग की समस्त दशाएं ही बदल जाती है। यह वस्तु की अपनी कीमत को छोड़कर किसी भी अन्य निर्धारक के मान में बदलाव का परिणाम होता है।

मांग में परिवर्तन के दो रूप हो सकते हैं : (i) मांग में वृद्धि, और (ii) मांग में कमी

i) मांग में वृद्धि उस समय होती है जब :

   क) नियत कीमत पर अधिक मात्रा की मांग हो, अथवा

   ख) उच्चतर कीमत पर मांगी गई मात्रा स्थिर रहे।

ii) इसके विपरीत मांग में कमी इन दो अवस्थाओं में होती है :

   क) पूर्वनिर्धारित कीमत पर मांग की मात्रा में कमी हो जाए, या

   ख) निम्न कीमत पर भी मांग की मात्रा पूर्ववत् रहे।

चित्रांकन की दृष्टि से मांग में वृद्धि का अभिप्रायः होगा समूचे मांग वक्र का दाहिनी और खिसक जाना। मांग वक्र का बायीं ओर खिसक जाना मांग में कमी की जानकारी देता है (देखें चित्र 2.5)।

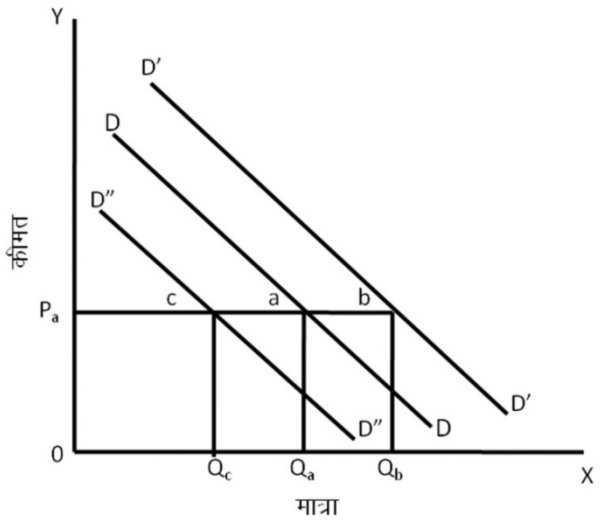

चित्र 2.5

यहां भी X-अक्ष पर मात्रा और Y-अक्ष पर कीमत दिखाई गई है। P_a पर मांग वक्र DD पर बिंदु 'a' के अनुरूप मांगी गई मात्रा OQ_a है। इसी कीमत OP_a पर मांग वक्र D'D' पर तो b बिंदु के अनुरूप मात्रा OQ_b हो जाएगी। यही मांग में वृद्धि कहलाती है। किंतु मांग वक्र D″D″ पर इसी कीमत OP_a पर बिंदु c के अनुरूप मांग की मात्रा OQ_c है– यह मांग में कमी को दर्शा रही है। मांग वक्र का प्रारंभिक स्थान से दाहिनी ओर खिसक जाना मांग में वृद्धि तथा बायीं ओर खिसक जाना 'मांग में कमी' कहलाता है।

मांग वक्र के खिसकाव के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हो सकते हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

1) मांग वक्र का दाहिनी ओर खिसकना (मांग में वृद्धि) उपभोक्ता की मौद्रिक आय में वृद्धि के कारण हो सकता है। यह उपभोक्ता को कीमत स्थिर रहने पर भी वस्तु की अधिक खरीदारी में समर्थ बना सकता है। इसी प्रकार बायीं ओर खिसकना या मांग में कमी का कारण उपभोक्ता की मौद्रिक आय में कमी को माना जा सकता है।

2) एक प्रतिस्थापक की कीमत में वृद्धि या फिर किसी संपूरक की कीमत में कमी भी मांग वक्र को दाहिनी ओर ले जाने में समर्थ होती है। मांग वक्र को हम बायीं ओर ले जाने का कारण किसी प्रतिस्थापक की कीमत में कमी या फिर संपूरक की कीमत में वृद्धि में भी तलाश कर सकते हैं।

3) उपभोक्ता के मन में किसी वस्तु के प्रति रुचि का जागृत होना तो कीमत स्थिर रहने पर भी अधिक मांग का कारण बन सकता है। यह रुचि की जागृति मांग वक्र को दाहिनी ओर खिसका देती है। दूसरी ओर, अरुचि की भावना के कारण मांग वक्र बायीं ओर खिसक सकता है।

बोध प्रश्न 2

1) एक मांग वक्र की रचना इस प्रकार है :

$$q = 90 - 3P$$

i) वह कीमत क्या होगी जिस पर कोई खरीदारी को तैयार नहीं हो?

ii) यदि वस्तु मुफ्त दी जा रही हो तो कितनी मात्रा की मांग होगी?

.....

.....

.....

2) मांग का नियम बताइए। क्या यह सभी वस्तुओं पर लागू होता है?

.....

.....

.....

3) प्रतिस्थापन प्रभाव क्या है?

.....

.....

.....

4) प्रतिस्थापन प्रभाव + आय प्रभाव = कीमत प्रभाव। क्या यह सदैव मान्य होता है?

.....

.....

.....

5) क्या अभिरुचियों में परिवर्तन मांग वक्र पर ही चलन का कारण बन जाता है?

.....

.....

.....

2.6 आपूर्ति की अवधारणा

आपूर्ति किसी वस्तु की उन मात्राओं को दर्शाती है जिनका उत्पादक विभिन्न कीमतों पर, प्रति समय इकाई, उत्पादन कर बिक्री करने को तैयार होते हैं। 'आपूर्ति' शब्द के ये अभिलक्षण होते हैं :

1) आपूर्ति को ''परिमाण'' द्वारा व्यक्त किया जाता है, अर्थात् वह परिमाण या मात्रा जो विक्रय हेतु प्रस्तुत की जाती है।

2) वस्तु की आपूर्ति सदैव 'किसी कीमत विशेष पर प्रस्तुत की जा रही मात्रा' द्वारा इंगित की जाती है। उदाहरणार्थ, यह कह देना कि उत्पादक एक हजार कम्बल देने को तैयार है पर्याप्त नहीं होगा। उसका कोई आर्थिक अर्थ नहीं होगा। किंतु यदि कहा जाता है कि वे रु. 500/– प्रति कम्बल की दर पर 1000 कम्बल की आपूर्ति को तैयार हैं तो फिर 'आपूर्ति' शब्द में कुछ आर्थिक अर्थ भी समाहित हो जाएगा।

3) आपूर्ति के मापन में समय की इकाई का भी महत्त्व होता है। यह प्रति दिन, सप्ताह, मास, वर्ष या कोई भी अन्य कालावधि हो सकती है।

औपचारिक रूप से, आपूर्ति उन मात्राओं से संबंधित है जिन्हें कोई उत्पादक विभिन्न कीमतों पर बेचने को तैयार होता है।

आपूर्ति के निर्धारक

हम आपूर्ति या आपूर्ति की मात्रा को महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित करने वाले कुछ मुख्य कारकों की इस प्रकार पहचान कर सकते हैं :

1) **आपूर्ति की जा रही वस्तु की कीमत** : वस्तु की कीमत उसकी आपूर्ति का सबसे निकटतम निर्धारक है। फर्म या आपूर्तिकर्ता तुरंत यह आकलन कर लेता है कि वह कीमत उसकी लागतों को पूरा कर पाएगी या नहीं। कीमत में वृद्धि होने पर फर्म अधिक मात्रा की बिक्री के लिए तैयार हो सकती है।

2) **उत्पादक संसाधनों की कीमतें या उत्पादन की लागत** : ये उत्पादन की लागतों तथा फर्म के संभावित लाभ को प्रभावित करती हैं। उत्पादक साधनों की कीमत में वृद्धि वस्तुओं के उत्पादन और आपूर्ति को हतोत्साहित करती है।

3) **अन्य वस्तुओं की कीमतें** : अन्य बातें पूर्ववत् रहने पर अन्य वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि से संदर्भित वस्तु के उत्पादन और आपूर्ति में कमी होगी क्योंकि अन्य वस्तुएं लाभ को अधिकतम करने के इच्छुक उत्पादक के लिए अधिक आकर्षक हो जाती है। अतः जिस वस्तु की कीमत स्थिर है उसकी आपूर्ति कम हो जाती है।

4) **प्रौद्योगिकी की अवस्था** : हमारे ज्ञान के स्तर में सुधार के साथ-साथ किसी भी वस्तु की उत्पादन की विधियां बदलने पर उत्पादन लागत कम होती है और उत्पादन में वृद्धि होती है।

5) **उत्पादक के लक्ष्य** : उत्पादक के ध्येयों का भी वस्तु की आपूर्ति पर प्रभाव रहता है।

हमारे लिए सभी निर्धारक कारकों में एक साथ आए परिवर्तनों के किसी वस्तु की आपूर्ति पर प्रभावों का आकलन-विश्लेषण बहुत कठिन होगा। इसीलिए हम सामान्यतः ऐसी स्थिति की कल्पना करते हैं जहाँ एक कारक में परिवर्तन होते समय अन्य सभी कारक पूर्ववत् ही रहते हैं। इस मान्यता के आधार पर हम किसी उत्पादक या उत्पादक समूह द्वारा की गई किसी वस्तु की आपूर्ति पर उस परिवर्तित कारक के प्रभाव का विश्लेषण कर पाते हैं।

2.7 आपूर्ति का नियम

हम मान लेते हैं कि उत्पादक का मुख्य उद्देश्य अपने लाभ को अधिकतम करना है और वह लाभ उसके सकल आगम तथा सकल लागत के बीच अंतर है। सकल या कुल आगम (TR) वस्तु की कीमत और विक्रित मात्रा का गुणनफल ही है। कुल लागत (TC) वस्तु की औसत उत्पादन लागत (AC) तथा उत्पादित मात्रा का गुणनफल है। अतः

$$\text{लाभ} = TR - TC$$

$$TR = Q.P \quad \text{और}$$

$$TC = Q.AC$$

उच्चतर कीमत का अर्थ होगा उच्चतर लाभ उत्पादक वस्तु की उच्चतर कीमत पर अधिक मात्रा की आपूर्ति करेगा। इसी प्रकार, कीमत में कमी होने पर उत्पादक उसकी कम मात्रा की आपूर्ति करना चाहेगा। किसी भी वस्तु की कीमत और उसकी आपूर्ति की मात्रा के बीच एक सीधा संबंध रहता है। इसी प्रत्यक्ष संबंध को हम 'आपूर्ति का नियम' कहते हैं।

मात्रा में परिवर्तन यहाँ प्रभाव है और कीमत में परिवर्तन उसका कारण है। अर्थात् आपूर्ति फलन है :

$$S = f(P)$$

2.7.1 आपूर्ति फलन

वस्तु की आपूर्ति की मात्रा उसकी अपनी कीमत, अन्य सभी वस्तुओं की कीमतों, उत्पादन

के कारकों की कीमतों, प्रौद्योगिकी, उत्पादकों के ध्येयों तथा अन्य कारकों पर निर्भर करती है :

$$Q_s = f(P_1, P_2, P_3... P_n, F_1... F_a, T, G, ...)$$

यहाँ Q_s = वस्तु की आपूर्ति की मात्रा;

P_1 = वस्तु की अपनी कीमत;

$P_2, P_3...P_n$ = अन्य वस्तुओं की कीमतें;

F_1 ..... F_n = सभी उत्पादन कारकों की कीमतें;

T = प्रौद्योगिकी का वर्तमान स्तर;

G = उत्पादक के ध्येय/लक्ष्य।

2.7.2 आपूर्ति तालिका

एक आपूर्ति तालिका में हम अन्य बातें पूर्ववत् रहने पर विभिन्न कीमतों पर वह मात्राएं दिखाते हैं जो हमारा उत्पादक निर्मित कर प्रति समय की अवधि में बेचने को तैयार होता है। कल्पित आंकड़ों पर आधारित एक आपूर्ति तालिका हम तालिका 2.3 में दर्शा रहे हैं। यह वस्तु की कीमतों और मात्रा के बीच आपूर्ति नियम के उदाहरण को दर्शाने वाले आंकड़े हैं।

तालिका 2.3: एक पैन निर्माता की आपूर्ति तालिका

प्रति पैन की कीमत (रुपयों में)	आपूर्ति की संख्या (1000 पैनों में) प्रति मास
2	25
3	40
4	50
5	60
6	70

तालिका 2.3 में प्रस्तुत आंकड़े दर्शाते हैं कि रु. 2/– प्रति पैन की कीमत पर हमारा उत्पादन प्रति मास 25 हजार पैन बनाकर आपूर्ति करने को तैयार है। उच्चतर कीमत रु. 3/– पर तो वह 40 हजार पैन बेचने को तैयार होगा। जैसे-जैसे पैन की कीमत में वृद्धि होती है वह उत्पादक प्रति मास और अधिक संख्या में पैन बनाकर बेचने को तैयार रहता है। यह आपूर्ति तालिका इस प्रकार बनाई गई है कि प्रति पैन कीमत और प्रति मास आपूर्ति के लिए प्रस्तुत पैनों की संख्या के बीच सीधा संबंध स्पष्ट रूप से दिखाया जा सके।

2.7.3 आपूर्ति वक्र

अब आप चित्र 2.6 पर दृष्टि डालिए। इसमें तालिका 2.3 के आंकड़ों को ही अंकित किया गया है। हमने कीमत को Y-अक्ष पर दिखाया है तथा मात्रा या पैनों की संख्या को X-अक्ष पर अंकित किया है।

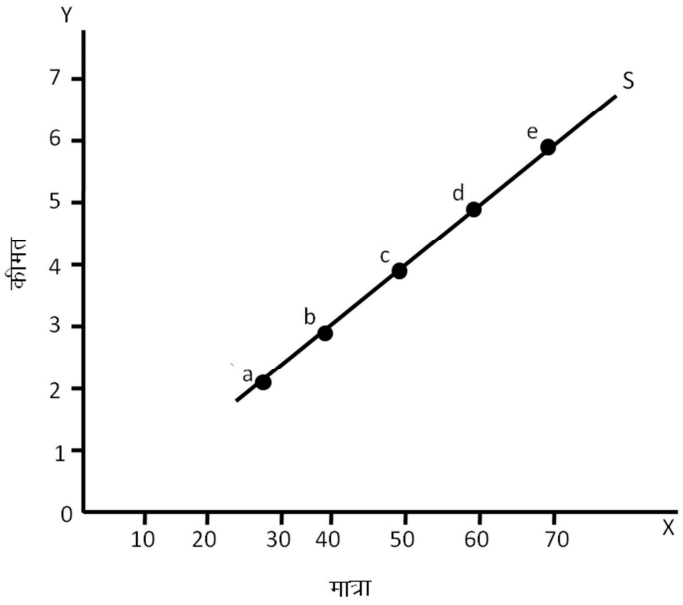

चित्र 2.6

हमारे चित्र में 'a' द्वारा निर्दिष्ट बिंदु वही जानकारी दे रहा है जो तालिक 2.3 की पहली पंक्ति में थी, अर्थात् रु. 2/– प्रति पैन कीमत पर उत्पादक प्रति माह 25,000 पैन बनाकर बेचेने को तैयार है। इसी प्रकार, बिंदु b, c, d, e हमें क्रमशः तालिका की अगली पंक्तियों की जानकारी दिखा रहे हैं।

हमारा आपूर्ति वक्र S एक सतत् रेखा है जिसे हमने बिंदु a, b, c, d और e को मिलाते हुए अंकित किया है। यह वक्र दिखाता है कि प्रत्येक कीमत पर पैनों की कितनी संख्या उत्पादन कर बिक्री के लिए उत्पादनकर्ता तैयार होगा।

मांग वक्र की ही भांति हमारा आपूर्ति वक्र भी एक सरल रेखा या फिर ऊपर की ओर उठता हुआ किंतु नीचे की ओर ऊतल वक्र हो सकता है।

आपूर्ति वक्र का धनात्मक ढाल या दाहिनी ओर ऊपर उठता हुआ स्वरूप यही बताता है कि कीमत अधिक होगी तो उत्पादक अधिक मात्रा बाज़ार में लाने को तैयार होगा। आपूर्ति वक्र को Y-अक्ष की ओर विस्तारित करने पर उसका अक्ष केंद्र से गुजरना निश्चित नहीं होता। यदि वह अक्ष केंद्र से गुजरती है तो तात्पर्य यही होगा कि कीमत शून्य होने पर आपूर्ति भी शून्य होगी। यदि वक्र Y-अक्ष को काटता है तो इससे हमें यही जानकारी मिलती है कि कीमत के एक निश्चित स्तर तक पहुंचने से पूर्व आपूर्ति शून्य ही रहती है। हमारे चित्र 2.6 में यदि कीमत एक रुपया प्रति पैन हो तो उत्पादक बाज़ार में कुछ भी नहीं बेचना चाहेगा। ऐसी कीमत को 'रिज़र्व कीमत' कहा जाता है। उत्पादक तभी बाज़ार में माल बेचना प्रारंभ करता है जब कीमत इस 'रिज़र्व कीमत' से कुछ अधिक हो। ऊपर की ओर उठता हुआ आपूर्ति वक्र हमारे आपूर्ति के नियम का एक चित्रांकन ही है।

2.7.4 आपूर्ति के नियम के अपवाद

सामान्यतः कीमत के साथ आपूर्ति का सीधा संबंध होता है। किंतु यहां हम कुछ ऐसी अपवाद स्वरूप स्थितियों की भी चर्चा कर रहे हैं जहां आपूर्ति का यह नियम लागू नहीं हो पाता।

यदि लाभ अधिकतम करना उत्पादक का लक्ष्य नहीं हो तो वह कीमत में वृद्धि नहीं होने पर भी अधिक माल बाज़ार में बिक्री के लिए पेश कर सकता है। उदाहरण के लिए, फर्म का लक्ष्य अपनी बिक्री को ही अधिकतम करना हो सकता है। वह कीमत अपरिवर्तित रहने पर भी अधिक माल ला सकती है।

इसी प्रकार, यदि किसी फर्म का कई कंपनियों के समूह पर नियंत्रण हो तो वह अलग-अलग वस्तुएं नहीं केवल समूचे समूह के लाभ को अधिकतम करने का लक्ष्य रखकर काम कर सकती है। ऐसी दशा में प्रत्येक उत्पाद पर आपूर्ति का नियम लागू नहीं हो पाएगा।

कीमत से इतर कारक स्थिर नहीं रह पाने की दशा में भी हमारे आपूर्ति के नियम की एक आधारभूत मान्यता का उल्लंघन हो जाता है। वास्तव में ऐसा कई बार हो सकता है कि अन्य कारकों के मान स्थिर नहीं रह पाते। यदि अन्य वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि हो रही हो और विचाराधीन वस्तु की कीमत स्थिर रहे तो इसकी आपूर्ति में कमी हो सकती है। दूसरी ओर, प्रौद्योगिकी के परिवर्तन वस्तु की आपूर्ति की मात्रा में बदलाव का कारण बन सकते हैं, भले ही उस वस्तु की कीमत स्थिर रहे।

बोध प्रश्न 3

1) उत्पादक उच्चतर कीमत पर अधिक आपूर्ति करते हैं। क्यों?

.....

.....

.....

2) सामान्यतः एक आपूर्ति वक्र दाहिनी ओर उठता हुआ क्यों होता है?

.....

.....

.....

2.8 आपूर्ति में परिवर्तन बनाम आपूर्ति की मात्रा में परिवर्तन

2.8.1 आपूर्ति की मात्रा में परिवर्तन

अन्य बातें स्थिर रहने पर केवल वस्तु की अपनी कीमत में परिवर्तन के कारण उसकी बिक्री के लिए पेश की जा रही मात्रा में परिवर्तन ही वस्तु की आपूर्ति की मात्रा में परिवर्तन कहलाता है। ये परिवर्तन दो प्रकार के हो सकते हैं :

1) कीमत में कमी के कारण आपूर्ति की मात्रा में आई कमी। इसे *'आपूर्ति का संकुचन'* कहते हैं (यदि आपूर्ति का नियम लागू हो रहा हो)।

2) कीमत में वृद्धि के कारण आपूर्ति के लिए प्रस्तुत मात्रा में वृद्धि (यदि आपूर्ति का नियम लागू हो) को *'आपूर्ति का प्रसार'* कहते हैं।

हम चित्र 2.7 में ये मांग के संकुचन और प्रसार के विचार दर्शा रहे हैं।

हम बिंदु b से चर्चा प्रारंभ कर रहे हैं जहां कीमत रु. 3/– और पैनों की आपूर्ति की गई संख्या 30,000 है। कीमत कम होकर रु. 2/– हो जाने पर आपूर्ति की मात्रा भी 20,000 इकाई रह जाती है। यह आपूर्ति का संकुचन है। कीमत रु. 4/– होने पर यह संख्या 40,000 हो जाती है। यही आपूर्ति का प्रसार है।

चित्र में हम इसे b बिंदु से a बिंदु की ओर गमन आपूर्ति का संकुचन है। इसी प्रकार, वक्र S पर बिंदु b से c को गमन आपूर्ति के प्रसार को दिखाता है।

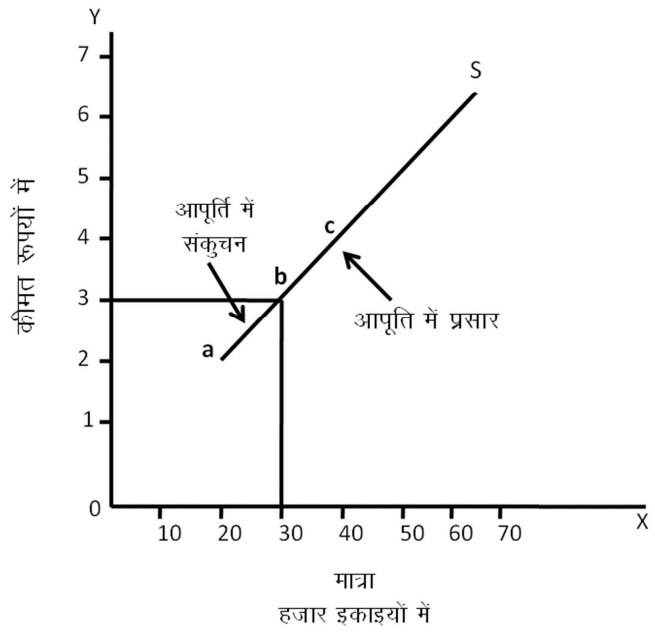

चित्र 2.7 : आपूर्ति वक्र

2.8.2 आपूर्ति में परिवर्तन

यह कीमत के अतिरिक्त किसी भी अन्य कारक में बदलाव के कारण आपूर्ति में आया परिवर्तन है। आपूर्ति में यह परिवर्तन भी दो प्रकार के होते हैं। इन्हें आपूर्ति वक्र के खिसकाव द्वारा दिखाया जाता है।

मांग में कमी : यदि कीमत स्थिर रहते हुए भी वस्तु की आपूर्ति की मात्राएं कम हो जाएं तो इसे हम मांग में कमी कहेंगे। इस दशा में पूरा आपूर्ति वक्र ही बायीं ओर (ऊपर की ओर) खिसक जाता है।

आपूर्ति में वृद्धि : यहां पुरानी कीमतों पर ही आपूर्ति की मात्राएं अधिक हो जाती हैं। यह पूरे आपूर्ति वक्र को दायीं ओर (बाहर की ओर) खिसका देता है।

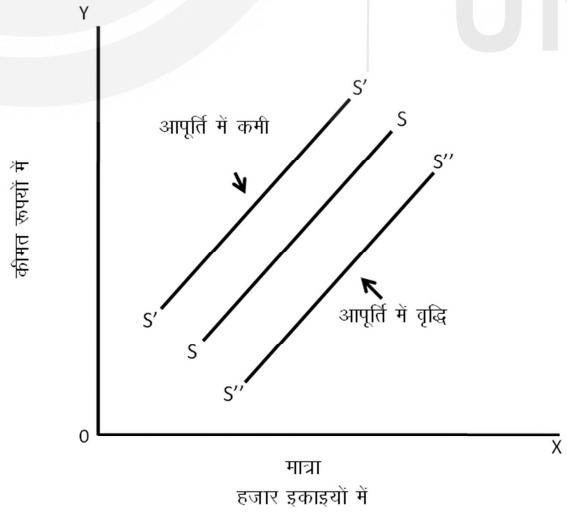

चित्र 2.8: आपूर्ति वक्र का खिसकना

संक्षेप में, यदि आपूर्ति वक्र दाहिनी ओर खिसक जाता है तो अर्थ यही होगा कि उत्पादक पुरानी कीमतों पर अधिक मात्राएं बेचने के लिए तैयार हैं। इसी प्रकार, आपूर्ति में कमी की स्थिति में पूरा वक्र बायीं ओर खिसक जाता है, अर्थात् उत्पादक पुरानी कीमतों पर पहले की अपेक्षा कम मात्राएं बेचने को उत्सुक रह जाते हैं।

2.8.3 आपूर्ति वक्र विस्थापित क्यों होता है?

आपूर्ति में परिवर्तन, अर्थात् वृद्धि और कमी के कारण इस प्रकार हैं :

1) **अन्य वस्तुओं की कीमतों में परिवर्तन** : अन्य वस्तुओं की कीमतों में कमी से उनसे होने वाला सापेक्ष लाभ कम रह जाता है, अतः उत्पादक आलोच्च्य वस्तु का उत्पादन बढ़ाकर अधिक लाभ पाने का प्रयास करता है। इसके विपरीत यदि अन्य वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होती है तो इस वस्तु का उत्पादन कम आकर्षक रह जाता है और इसको प्रत्येक कीमत पर बाज़ार में कम मात्राओं में लाया जाता है।

2) **उत्पादक साधनों की कीमतों में परिवर्तन** : किसी वस्तु के लिए काम आने वाले संसाधनों की कीमत में वृद्धि उसके उत्पादक को हतोत्साहित करती है। संसाधन कीमतों में कमी से उसकी लागतों की गिरावट से लाभ में सुधार होता देखकर वही उत्पादक प्रत्येक कीमत पर अपेक्षाकृत अधिक माल बाज़ार में लाने को उत्सुक हो जाता है।

3) **प्रौद्योगिकी में परिवर्तन** : प्रौद्योगिकी में सुधार से प्रायः उत्पादन लागत कम होती है और वस्तु की कीमत अपरिवर्तित होते हुए भी उत्पादक अधिक माल बनाकर बाज़ार में लाने लगता है। किंतु यदि किसी बहुत ही विपरीत परिस्थिति में तकनीकी ह्रास हो जाए (ऐसी संभावना कम ही होती है) तो फिर बाज़ार आपूर्ति में गिरावट आ सकती है।

4) **अन्य कारकों में परिवर्तन अथवा परिवर्तन की आशा** : कई बार सरकार की कर संबंधी नीतियों या फिर ब्याज़ की दरों के विषय में आशाएं/अपेक्षाएं, युद्ध की आशंकाओं और कतिपय वस्तुओं की मांग को प्रभावित करने वाली आय की विषमताओं में परिवर्तन भी उन्हें उत्पादित करना कम या फिर अधिक आकर्षक बना सकती हैं। अतः लाभ के बारे में आशाएँ उत्पादन और आपूर्ति को प्रभावित करती हैं।

बोध प्रश्न 4

1) आपूर्ति वक्र का दाहिनी ओर खिसकना क्या दर्शाता है?

.....

.....

.....

2) अपनी कीमत के अतिरिक्त अन्य कारकों के प्रभाव आपूर्ति वक्र के खिसकाव द्वारा दिखाएं जाते हैं। क्यों?

.....

.....

.....

3) आपूर्ति में वृद्धि और आपूर्ति के प्रसार में भेद स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

4) आपूर्ति का संकुचन आपूर्ति में कमी से किस प्रकार भिन्न है?

.....

.....

.....

2.9 लोच का विचार

हमने भाग 2.4 से 2.8 तक निर्धारक चरों में परिवर्तनों के मांग और आपूर्ति पर प्रभावों का अध्ययन किया है। वहाँ हमने वस्तु की अपनी कीमत, संबद्ध वस्तुओं की कीमतों और उपभोक्ता की आय के उस द्वारा की जा रही मांग पर प्रभावों की विशेष रूप से समीक्षा की है। साथ ही किसी वस्तु की कीमत और उत्पादन के साधनों की कीमतों में परिवर्तन आदि के उसकी आपूर्ति पर प्रभावों को भी समझने का प्रयास किया है। यह सारा विश्लेषण एक ही बात को स्पष्ट करता है : किसी निर्धारक चर में परिवर्तन का निर्धारित चर के मान पर प्रभाव होता है। हम अभी भी यह नहीं जानते कि वह प्रभाव कितना प्रबल होता है। हम अभी भी यह बता पाने की स्थिति में नहीं हैं कि संतरों की कीमत में 10 प्रतिशत की वृद्धि के परिणामस्वरूप उनकी मांग (और आपूर्ति) में कितना परिवर्तन होगा। इस कारण से नीतिगत परिवर्तनों के प्रभावों की समीक्षा कर पाना कठिन रहता है। यही नहीं, हम वास्तव में तो विभिन्न निर्धारकों के प्रभावों के सापेक्ष बलाबल का आकलन भी नहीं कर पाते। इसी कार्य के लिए हम 'लोच की संकल्पना' का सहारा लेते हैं।

किसी चर X की अन्य चर Y के परिवर्तनों के प्रति लोचशीलता अथवा संवेदनशीलता ही ''लोच'' है। Y के प्रति X की लोच को हम X में प्रतिशत परिवर्तन के Y में प्रतिशत परिवर्तन के साथ अनुपात द्वारा परिभाषित करते हैं। अर्थात् :

$$E_{xy} = \frac{\text{X में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{Y में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

हम इसे इस प्रकार भी लिख सकते हैं :

$$E_{xy} = \frac{\Delta X/X}{\Delta X/Y}$$

अतः संतरों की मांग (अथवा आपूर्ति) की उनकी कीमत में परिवर्तन के प्रति लोच होगी :

$$E_{q,p} = \frac{\Delta Q/Q}{\Delta P/P}$$

जहाँ Q द्वारा वस्तु की मात्रा और P द्वारा उसकी कीमत को निर्दिष्ट किया जाता है।

यदि हम X और Y चिन्हों द्वारा दो वस्तुओं को निर्दिष्ट करें और उनकी मात्राओं और कीमतों को Q_X, Q_Y, P_X और P_Y द्वारा दर्शाएं तो हम वस्तु Y की कीमत में परिवर्तन के प्रति वस्तु X की मांग की तिर्यक या आड़ी लोच का पद इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$E_{xy} = \frac{\Delta Q_X/Q_X}{\Delta P_Y/P_Y}$$

इसी प्रकार हम मांग की आय लोच भी दर्शा सकते हैं :

$$E_{XM} = \frac{\Delta Q_X/Q_X}{\Delta M/M}$$

जहाँ M उपभोक्ता की आय को दर्शा रहा है।

2.9.1 मांग की लोच

हम कुछ चित्रों का प्रयोग कर विभिन्न मांग वक्र और उनकी लोचशीलता दिखा सकते हैं। चित्र 2.9 में शून्य लोचशीलता का मांग वक्र दर्शाया गया है– यहां कीमत में परिवर्तन का उसकी मांगी गई मात्रा पर कोई प्रभाव नहीं होता। ऐसी वस्तुएं परम या अत्यंत आवश्यक मानी जाती हैं।

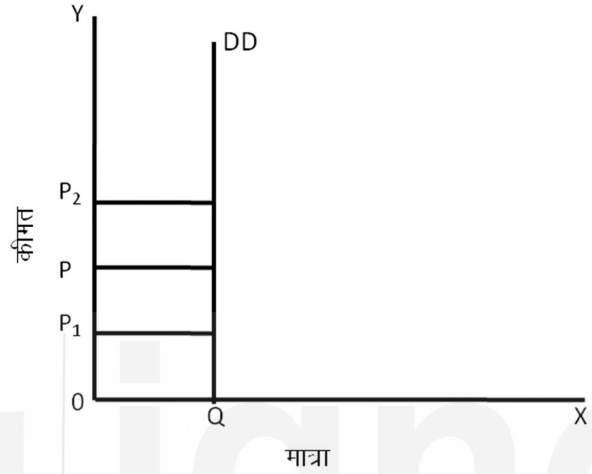

चित्र 2.9

चित्र 2.10 में हम अनंत लोच वाली मांग वक्र दर्शा रहे है। कीमत में छोटे से परिवर्तन से ही मांगी गई मात्रा में बहुत बड़ा बदलाव आ सकता है।

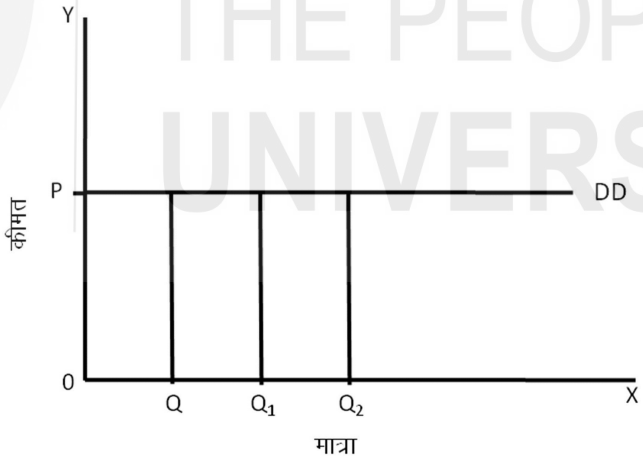

चित्र 2.10

तीसरी अवस्था एक दाहिनी ओर ढलवा रैखिक मांग वक्र की है। हमारा चित्र 2.11 दिखा रहा है कि ऐसे मांग वक्र पर लोच का मान निचले रेखा खंड का ऊपर वाले रेखा खंड से अनुपात होगा। अर्थात्

$$E = (-)\frac{BE}{EA}$$

प्रमाण : प्रारंभिक कीमत OH तथा मात्रा OM थी। कीमत बढ़कर OA हो गई है। इस कीमत पर तो उपभोक्ता कोई मांग नहीं करता। नई मांग की मात्रा शून्य है। इस जानकारी का लोच के सूत्र में प्रयोग करने पर :

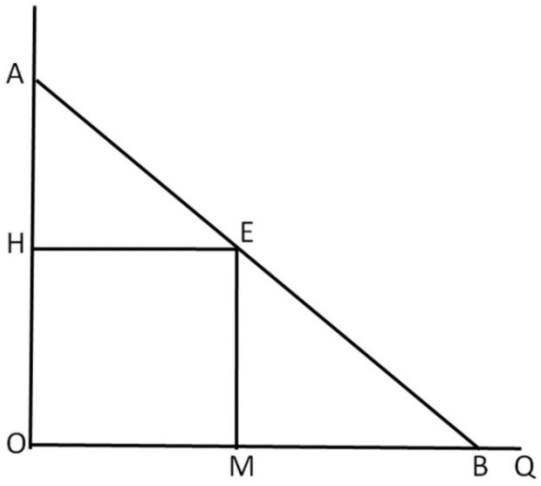

चित्र 2.11

E_p = मात्रा में परिवर्तन / प्रारंभिक मात्रा) / (कीमत में परिवर्तन / प्रारंभिक कीमत)

अब समकोण त्रिभुज AOB पर विचार करें। HE रेखा आधार OB के समांतर है। अतः यह लंब तथा विकर्ण को समान अनुपात में विभाजित करती है। अतः

$$\frac{OH}{HA} = \frac{BE}{EA}$$

इसका अर्थ है कि मांग वक्र AB के किसी भी बिंदु E पर लोच का मान निचले रेखा खंड BE के ऊपर वाले रेखाखंड EA के साथ अनुपात के समान होगा।

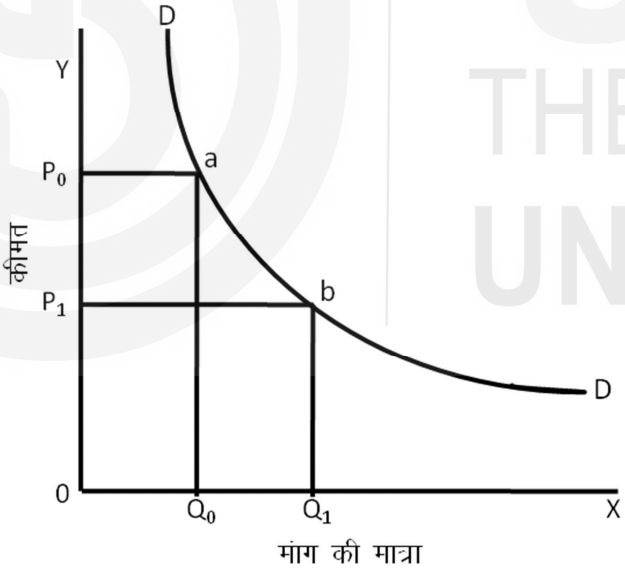

चित्र 2.12

आइए, अब एक विशेष प्रकार के मांग वक्र पर चर्चा करें जिसके प्रत्येक बिंदु पर लोच का मान एक इकाई के समान रहता है। ऐसा मांग वक्र हम एक आयताकार अति परावला होता है जिसके प्रत्येक बिंदु से बनाएं गए आयत का क्षेत्रफल समान रहता है। ऐसा ही मांग वक्र हमने चित्र 2.12 में दिखाया है।

2.9.2 आपूर्ति की लोच

पूर्णतः लोचहीन मांग वक्र की ही भांति एक शून्य लोच वाली आपूर्ति वक्र भी ऊर्द्धव सरल रेखा होती है।

अक्ष केंद्र से गुजरने वाली सरल रेखीय आपूर्ति वक्र के प्रत्येक बिंदु पर आपूर्ति की लोच का मान एक इकाई होता है।

मात्रा अक्ष के समांतर आपूर्ति वक्र अनंत लोचशीलता को दर्शाती है। यह भी मांग वक्र जैसी ही अवस्था है।

कीमत अक्ष को काटने वाली रेखीय आपूर्ति वक्र पर प्रथम चतुर्थांश में प्रत्येक बिंदु पर लोच का मान इकाई से अधिक होगा।

मात्रा अक्ष को पहले चतुर्थांश में काटने वाली रेखीय आपूर्ति वक्र के प्रत्येक बिंदु पर लोच का मान एक इकाई से कम होगा।

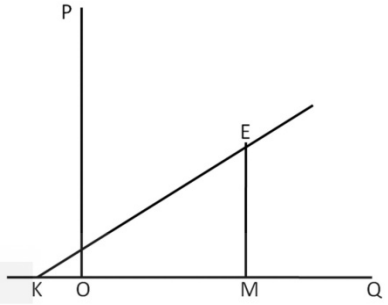

चित्र 2.13

हम उपर्युक्त विशेषताओं वाली आपूर्ति वक्रों के बारे में एक सामान्य टिप्पणी कर सकते हैं। चित्र 2.13 में दर्शाए गए रेखीय आपूर्ति वक्र में बिंदु E पर लोच का मान : ज्ञात करने के लिए EM लंब OQ गिराइए। आपूर्ति वक्र को सवंर्धित कर उससे K बिंदु पर मात्रा अक्ष का प्रतिच्छेदन करवाइए। अब,

$$E_S = \frac{KM}{OM}$$

यदि आपूर्ति रेखा केंद्र से गुजरती है– तो K भी O पर ही होगा। अतः KM/OM अनुपात इकाई के समान होगा। यदि आपूर्ति वक्र पहले चतुर्थांश में मात्रा अक्ष को काटती है तो KM < OM होगा। चित्र 2.13 में आपूर्ति रेखा ने मात्रा अक्ष को दूसरे चतुर्थांश में काटा है। अतः KM > OM । अतः यहां लोच का मान इकाई से अधिक है।

2.10 मांग की कीमत लोच का मापन

मांग की कीमत लोच के मापन की कई विधियाँ हैं। उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण विधियाँ इस प्रकार हैं :

1) **बिंदु विधि** : इसी को प्रतिशत विधि भी कहते हैं (जैसा ऊपर बताया गया है)। इस विधि के संबंध में एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि कीमत और मांग की मात्रा के परिवर्तन बहुत सूक्ष्म हों।

2) **कुल व्यय विधि** : इस विधि का प्रयोग करते समय कीमत और मांग के परिवर्तन सूक्ष्म होने आवश्यक नहीं होते। किंतु इस विधि की एक सीमा भी है : यह हमें मांग की लोच के गुणंक का सटीक माप प्रदान नहीं कर पाती – यह तो केवल तीन अवस्थाएं बता पाती हैं : (i) क्या मांग की कीमत लोच इकाई है; (ii) क्या मांग की कीमत लोच इकाई से अधिक है; और (iii) क्या मांग की कीमत लोच इकाई से कम है। यहां लोच का मापन P_1Q_1/ P_0Q_0 अनुपात द्वारा होता है।

   $E= (P_1Q_1)/ (P_0Q_0)$ जहां प्रारंभिक कीमत और मात्रा के लिए '0' चिन्ह का प्रयोग किया गया है, तथा परिवर्तन के लिए '1' का।

3) **ज्यामितिक विधि**

यह विधि इस बात को भी स्पष्ट करती है कि मांग वक्र के विभिन्न बिंदुओं पर कीमत लोच के मान अलग-अलग होते हैं। एक सरल रेखीय मांग वक्र पर लोच का मापन इस प्रकार किया जाता है :

E_p = मांग वक्र का निचला छोर / मांग वक्र का ऊपर वाला छोर

2.11 मांग की कीमत लोच के निर्धारक तत्व

मांग की कीमत लोच अनेक कारकों पर निर्भर करती है। इनमें से प्रमुख कारक इस प्रकार हैं :

1) **वस्तु की प्रकृति या स्वरूप** : प्रायः वस्तुओं को तीन वर्गों में बांट दिया जाता है– (i) आवश्यक, (ii) सुविधाएं, और (iii) विलासिता सूचक वस्तुएं। यदि वस्तु 'आवश्यक' वर्ग की हो तो उसकी कीमत लोच कम रहेगी। नमक की कीमत में वृद्धि होने पर भी व्यक्ति को इसकी मांग में अधिक कटौती को विवश नहीं कर पाती। किंतु विलासिता पदार्थों की मांग व्यक्तियों की धनाढ्यता पर अधिक निर्भर करती है। उस पर कीमत परिवर्तन का प्रभाव कम ही रहता है।

2) **प्रतिस्थापकों की सुलभ संख्या** : जिन वस्तुओं के प्रतिस्थापक सहज सुलभ हों, उनकी मांग अधिक लोचपूर्ण होगी।

3) **वस्तु के संभावित उपयोगों की संख्या** : वस्तु की संभव उपयोग संख्या जितनी अधिक हो, उसकी मांग उतनी ही अधिक लोचशील होती है।

4) **वस्तु का कीमत स्तर** : कीमत के स्तर का भी मांग की लोच पर गहरा प्रभाव होता है। एक बार चित्र 2.12 पर पुनः विचार करेंगे तो यह बात सहज ही स्पष्ट हो जाएगी, जितनी अधिक कीमत होगी, लोचशीलता भी उतनी ही अधिक होगी।

मांग की लोच का महत्त्व

किसी भी वस्तु बाज़ार के विषय में नीतिगत निर्णय प्रक्रिया में मांग की कीमत लोच बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है। इस कीमत लोच के महत्त्वपूर्ण कार्य क्षेत्र इस प्रकार हैं :

1) **एकाधिकारी द्वारा कीमत निर्धारण** : एकाधिकारी सदा ही उच्च कीमत वसूलने के लिए उत्सुक होता है। यदि उसे पता चल जाए कि किसी वस्तु की मांग की कीमत लोच कम है तो वह उसके लिए उच्चतर कीमत निर्धारित कर देगा। जबकि जिस वस्तु की मांग की कीमत लोच अधिक होगी वहां वह उच्च कीमत वसूल नहीं कर पाएगा।

2) **सरकार के कीमत समर्थन कार्यक्रम** : कृषिक वस्तुओं की मांग की कीमत लोच कम होती है। अतः अच्छे मानसून के कारण उत्पादन में आया उछाल उनकी कीमतों को बहुत कम कर सकता है। यहां सरकार किसानों के हितों की रक्षा के लिए एक समर्थन कीमत नियत कर बाज़ार कीमत को उस स्तर से नीचे जाने से रोक सकती है। ऐसी दशा में बाज़ार में आपूर्ति की अधिकता दिखाई देगी और स्वाभाविक है कि सरकार को ही वह अधिक आपूर्ति स्वयं खरीदनी होगी।

इसी प्रकार यदि फसल अच्छी नहीं हो तों कीमतों में बहुत वृद्धि की आशंका होती है। यहां सरकार को उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के लिए अधिकतम कीमत की घोषणा कर बाज़ार में विद्यमान अधिक मांग को पूरा करने के लिए सरकार अपने गोदामों से वह वस्तुएं जारी करती है या फिर विदेशों से आयात कर उन्हें बाज़ार में सुलभ कराती है।

बोध प्रश्न 5

1) आय लोच केवल सामान्य वस्तुओं के लिए धनात्मक होती है। व्याख्या करें।

.....

.....

.....

2) आड़ी लोच गुणांक का चिन्ह इस बात पर निर्भर करता है कि वस्तुएं परस्पर अनुपूरक हैं या प्रतिस्थापक। व्याख्या करें।

.....

.....

.....

2.12 आपूर्ति की लोच के निर्धारक

किसी भी वस्तु की आपूर्ति की लोच अनेक कारकों पर निर्भर करती है, और उस लोच पर कोई भी टिप्पणी करने से पूर्व उन सभी कारकों पर ध्यान देना आवश्यक है। आपूर्ति की लोच के कुछ महत्त्वपूर्ण निर्धारक इस प्रकार हैं :

1) **उत्पादन परिवर्तन पर लागतों का व्यवहार** : वस्तु का उत्पादन बढ़ाने पर कुल लागत में वृद्धि प्रायः प्रारंभ में ह्रासमान दर पर होती है, फिर एक स्थिर दर पर और अंत में यह दर वृद्धिमान हो जाती है। यदि उत्पादन बढ़ाने पर उत्पादन लागत तेज़ी से बढ़ने लगे तो कीमत वृद्धि से प्रेरित होकर उत्पादन बढ़ाने का उत्साह फीका पड़ जाता है।

2) **वस्तु की प्रकृति** : शीघ्रविनाशी वस्तुओं को देर तक संभाल कर नहीं रखा जा सकता। इनकी आपूर्ति कीमत परिवर्तन के साथ अधिक संवेदनशीलता नहीं दर्शाती। दीर्घोपयोगी वस्तुओं को संभाल कर रखा जा सकता है। इस कारण से कीमत परिवर्तन होने पर आपूर्ति में परिवर्तन हो सकते हैं।

3) **समय** : वस्तु की अल्पकालिक आपूर्ति की लोच निम्न रहती है। हाँ, दीर्घकाल में तो संयंत्र का आकार और प्रौद्योगिकी आदि सभी में परिवर्तन संभव हो जाते हैं। अतः दीर्घकाल में आपूर्ति की लोच अधिक होगी।

4) **कीमत संबंधी अपेक्षाएँ** : यदि उत्पादकों को भरोसा हो कि भविष्य में कीमत को किसी स्तर विशेष से नीचे नहीं गिरने दिया जाएगा तो वे अधिक उत्पादन कर सकते हैं। किंतु यदि उन्हें भविष्य में कीमत वृद्धि की आशा हो तो वे अधिक उत्पादन कर उसका बड़ा भाग अपने भण्डार में जमा करने लगते हैं, इससे बाज़ार में आपूर्ति कम रह जाती है। यहां तो आपूर्ति की लोचशीलता कम रह जाएगी। यदि भविष्य में कीमत कम होने की आशंका हो तो आपूर्ति अधिक लोचशील हो जाती है।

2.13 सार-संक्षेप

मांग पर्याप्त क्रम शक्ति से सन्नद्ध उपभोक्ता की दी हुई बाज़ार कीमत पर किसी वस्तु को खरीदने की इच्छा या तत्परता है। वस्तु की अपनी कीमत, संबद्ध वस्तुओं की कीमतें तथा उपभोक्ता की आय और अभिरुचियाँ उसकी मांग का निर्धारण करती हैं।

फर्म दी हुई कीमत पर प्रत्येक अवधि में जितनी मात्रा में बेचने को तैयार हो उसे फर्म की आपूर्ति कहा जाता है। वस्तु की आपूर्ति अपनी कीमत, संबद्ध वस्तुओं की कीमतों

और उत्पादन के संसाधनों की कीमतों पर निर्भर करती है। प्रौद्योगिकी का स्तर भी आपूर्ति का एक महत्त्वपूर्ण निर्धारक होता है।

वस्तु की अपनी कीमत और संबंधित वस्तुओं की कीमतों में परिवर्तन के प्रति उसकी मांग (आपूर्ति) की मात्रा की संवेदनशीलता को उसकी मांग (आपूर्ति) की लोच का नाम दिया जाता है। मांग के संदर्भ में हम लोच को आय के प्रति भी माप सकते हैं। लोच का मापन बिंदु विधि, कुल व्यय विधि और ज्यामितिक विधि द्वारा हो सकता है। वस्तु की अपनी प्रकृति, उसके प्रतिस्थापकों की संख्या, उसके प्रयोग तथा कीमत के स्तर कीमत लोच के महत्त्वपूर्ण निर्धारक होते हैं। एकाधिकारी द्वारा कीमत निर्धारण, सरकार के कीमत समर्थन कार्यक्रमों और अप्रत्यक्ष करों के आपात/प्रभाव में मांग और आपूर्ति की लोच की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

2.14 संदर्भ ग्रंथादि

1) Case, Karl E. and Ray C. Fair, Principles of Economics, Pearson Education, New Delhi, 2015

2) Stiglitz, J.E. and Carl E. Walsh, Economics, viva Books, New Delhi, 2014

3) Hal R. Varian, Intermediate Microeconomics: a Modern Approach, 8th edition, W.W. Norton and Company/Affiliated East-West Press (India), 2010.

2.15 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) भाग 2.2 देखें।

2) भाग 2.3.1 देखें।

3) जनसंख्या का आकार, आय का विभाजन

बोध प्रश्न 2

1) (i) रु. 30 (ii) q=90

2) भाग 2.4 देखें।

3) भाग 2.4 देखें।

4) भाग 2.4 देखें।

5) भाग 2.5 देखें।

बोध प्रश्न 3

1) भाग 2.6 देखें।

2) भाग 2.7.2 देखें।

बोध प्रश्न 4

1) भाग 2.8.2 देखें।

2) भाग 2.8.3 देखें।

3) भाग 2.8 देखें।

4) भाग 2.8.1 और 2.8.2 देखें।

बोध प्रश्न 5

1) भाग 2.9 देखें।

2) भाग 2.9 देखें।

2.16 पाठांत प्रश्न

1) बाज़ार में किसी वस्तु की मांग के मुख्य निर्धारकों की व्याख्या करें।

2) एक मांग अनुसूची और मांग वक्र का प्रयोग कर मांग का नियम समझाएं।

3) प्रतिस्थापन और आय प्रभावों का प्रयोग कर मांग के नियम के अपवाद समझाइए।

4) निकृष्ट पदार्थ और गिफ्फन पदार्थ में भेद स्पष्ट करें।

5) सरकार अपनी कीमत तथा कर एवं साहाय्य नीति विषयक निर्णयों में मांग के नियम के क्या प्रयोग कर सकती हैं।

6) आपूर्ति का नियम क्या है? उपयुक्त उदाहरण का प्रयोग कर व्याख्या करें।

7) वे परिस्थितियाँ समझाइएं जिनमें आपूर्ति का नियम लागू नहीं हो पाता।

इकाई 3 मांग और आपूर्ति : व्यावहारिक अनुप्रयोग

संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 विषय प्रवेश

3.2 संतुलन का निर्धारण

3.3 माँग और आपूर्ति वक्र में परिवर्तन (खिसकाव) के संतुलन पर प्रभाव
- 3.3.1 संतुलन का निर्धारण : एक गणितीय प्रस्तुति
- 3.3.2 संतुलन विलक्षणता और बहुलता

3.4 माँग और आपूर्ति : कुछ अनुप्रयोग
- 3.4.1 राशनिंग और दुर्भल वस्तुओं का आवंटन
- 3.4.2 कीमत समर्थन के उपाय
- 3.4.3 न्यूनतम मज़दूरी विधेयन
- 3.4.4 अंतर्पण्य (Arbitrary)
- 3.4.5 कर के भार का विभाजन

3.5 सार-संक्षेप

3.6 संदर्भ ग्रंथादि

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

3.8 पाठांत प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि:

- बाज़ार में मांग और कीमत के विचार को ठीक से समझ पाएँ;
- कीमत नियंत्रण, न्यूनतम मज़दूरी, कीमत समर्थन तथा कीमत एवं मात्रा पर मुनाफा वसूली का विश्लेषण कर पाएँ;
- इस बात का निर्धारण कि करों और साहाय्यों के उपभोक्ताओं तथा उत्पादकों पर क्या प्रभाव होंगे; तथा
- जान पाएं कि हमारे दैनिक जीवन में आर्थिक सिद्धांत किस प्रकार उपयोगी रहते हैं।

3.1 विषय प्रवेश

मांग और आपूर्ति वक्रों का प्रयोग बाज़ार की प्रक्रियाओं के निरूपण के लिए किया जाता है। बाज़ार की ये दोनों शक्तियाँ संतुलन निर्धारण के माध्यम से यह निश्चित करती हैं कि बाज़ार में किसी वस्तु की कीमत क्या होगी तथा उसकी कुल कितनी मात्रा का उत्पादन कर उसकी आपूर्ति की जाएगी। कीमत का स्तर और मात्रा मांग और आपूर्ति के विशेष अभिलक्षणों पर निर्भर रहते हैं। समय के अनुसार कीमत और मात्रा इस बात

पर निर्भर रहती हैं कि मांग और आपूर्ति की अन्य आर्थिक कारकों के परिवर्तनों पर क्या प्रतिक्रियाएँ रहती हैं।

इस इकाई में हम आपका परिचय इस विश्लेषण की उपादेयता के साथ कराएंगे।

3.2 संतुलन का निर्धारण

संतुलन कीमत उसे कहते हैं जिस पर वस्तु की मांग तथा उसकी आपूर्ति की मात्राएं एक समान हों। हम जानते हैं कि मांग की मात्रा कीमत का एक विलोम फलन होती है और आपूर्ति की मात्रा सीधा (या अनुलोम) फलन होती है। हम, उदाहरण के लिए इन फलनों को निम्न समीकरणों द्वारा दिखा सकते हैं :

$$q^d = 10 - 1P$$

और $$q^s = 1P$$

हमारी परिभाषा के अनुसार संतुलन कीमत पर मांग और आपूर्ति एक समान होंगे, अर्थात्

$$q^d = q^s$$

अथवा $$10 - 1P = 1P$$

अतः $$P = 5$$

दूसरे शब्दों में, रु. 5 प्रति इकाई कीमत पर जितनी मात्रा में उपभोक्ता इस वस्तु की खरीदारी करना चाहता है उतनी मात्रा विक्रेता बेचना चाहता है। यह मात्रा होगी, 5 इकाई $\therefore q^d = q^s \; q^d = 5$ ।

हम इन फलनों को चित्र 3.1 में रेखांकित कर सकते हैं। हम पाते हैं कि मांग फलन दाहिनी ओर ढलवाँ होगा और आपूर्ति वक्र दाहिनी ओर उठता हुआ बनेगा। ये E बिंदु पर प्रतिच्छेदन करते हुए **मार्शल क्रॉस** बनाते हैं।

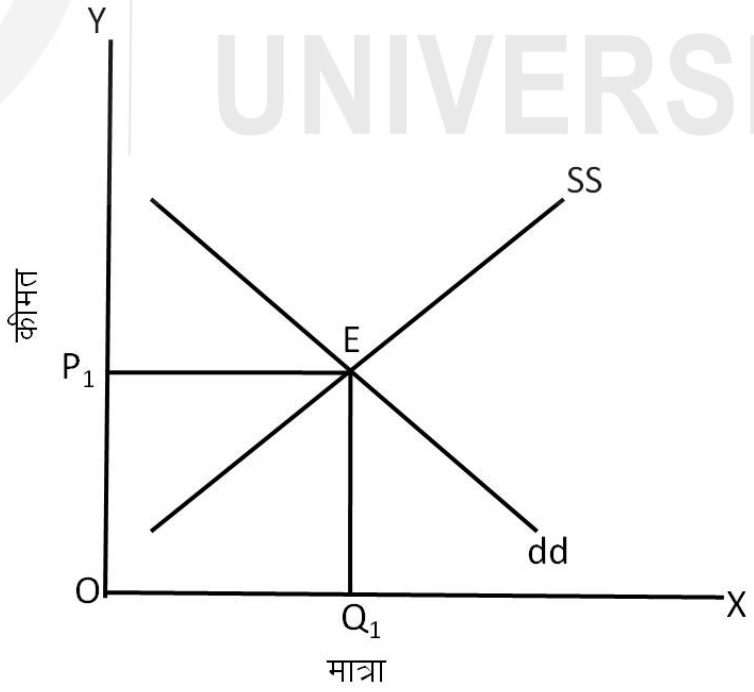

चित्र 3.1

संतुलन में OQ_1 मात्रा की खरीद और बिक्री OP_1 कीमत पर होती है।

यदि किसी कारणवश कीमत संतुलन कीमत OP_1 से कम होती तो OP_1 पर मांगी गई मात्रा आपूर्ति की मात्रा से कम रहती। इसे हम बाज़ार में अतिरिक्त मांग TW कहेंगे (चित्र 3.2)। इससे कीमत में वृद्धिकारी दबाव बनेगा और वह अंततः कीमत को संतुलन कीमत तक पहुँचा देगा।

इसी प्रकार यदि बाज़ार कीमत संतुलन कीमत से अधिक हो तो अतिरिक्त आपूर्ति RS होगी। इसके फलस्वरूप कीमत पर नीचे की ओर जाने का दबाव बनेगा। यहां भी अंततः OP_2 पर पुनः संतुलन की स्थापना हो जाएगी।

इन दो बातों से हम इन निष्कर्षों पर पहुँचते हैं :

- सभी मांग वक्र अपने पूरे वितान में नीचे की ओर ढलाव होंगे;
- सभी आपूर्ति वक्रों का पूरे वितान में धनात्मक ढाल होगा;
- कीमत में परिवर्तन तभी होगा जब या तो मांग का अतिरेक हो या आपूर्ति का; तथा
- यदि मांग अतिरेक हो तो कीमत में वृद्धि होगी और यदि आपूर्ति का अतिरेक हो तो कीमत में गिरावट आएगी।

संक्षेप में, बाज़ार कीमत संतुलन कीमत की ओर प्रवृत्त होती है। इसे हम **स्थायित्वपूर्ण संतुलन** कहते हैं।

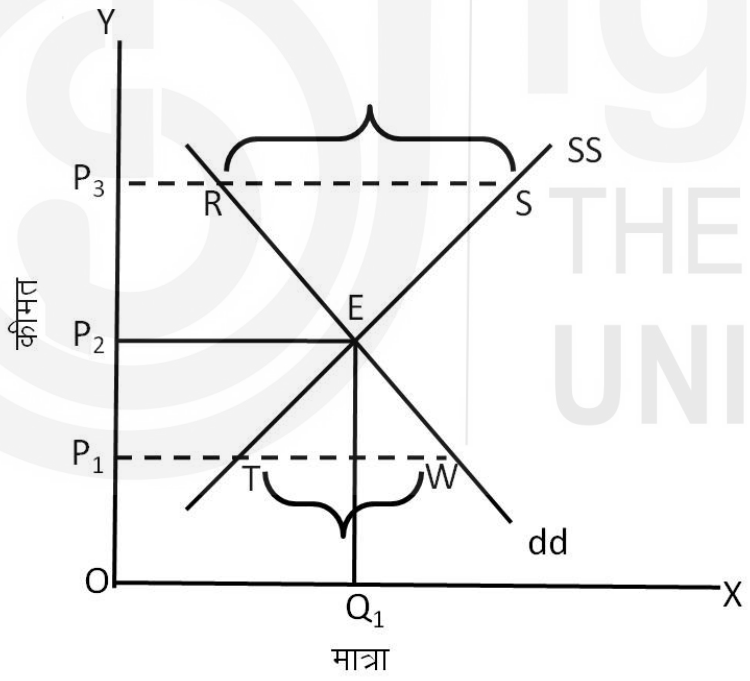

चित्र 3.2

संतुलन के स्थायित्वपूर्ण होने की एक आवश्यक शर्त यही है कि मांग वक्र का ढाल ऋणात्मक तथा आपूर्ति वक्र का धनात्मक हो। अन्यथा हमें स्थायित्वपूर्ण संतुलन नहीं मिल पाएगा, हमें **अस्थायित्वपूर्ण संतुलन** का सामना करना पड़ेगा।

ऐसी ही स्थिति हम चित्र 3.3 में दिखा रहे हैं।

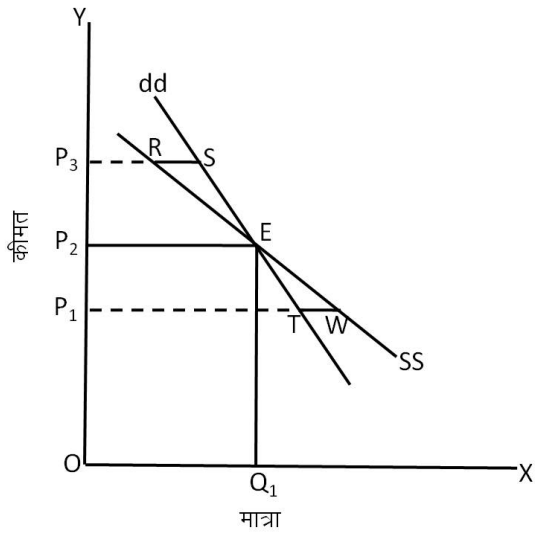

चित्र 3.3

यहाँ हमने मांग और आपूर्ति, दोनों वक्रों का ऋणात्मक ढाल के साथ बनाया है। संतुलन बिंदु E है। यदि बाज़ार कीमत गिरकर OP_1 हो जाए तो आपूर्ति की मात्रा > मांग की मात्रा, अतः फिर तो बाज़ार कीमत को बढ़ने के स्थान पर और गिरना चाहिए।

इसी प्रकार यदि कीमत OP_3 हो जाए तो आपूर्ति की मात्रा < मांग की मात्रा। अतः कीमत पर और वृद्धि का दबाव बन जाएगा (यह घटकर वापस संतुलन स्तर OP पर नहीं लौट पाएगी)।

यह अस्थायित्वपूर्ण संतुलन की स्थिति है। संतुलन के स्थायित्व की शर्त यह है कि कीमत के अधिक होने पर ($Q^s > Q^d$) तथा कीमत के संतुलन स्तर से कम होने पर (Q^d, $> Q^s$) । हमारे उपर्युक्त उदाहरण में ऐसा नहीं हो पा रहा। अतः वहां संतुलन भी स्थिरतापूर्ण नहीं है।

क्या आपूर्ति वक्र के ऋणात्मक ढाल के बावजूद संतुलन स्थिरतापूर्ण हो सकता है?

हाँ, यह संभव है। हम ऐसी ही एक स्थिति को चित्र 3.4 में दिखा रहे हैं। संतुलन कीमत OP_1 से उच्च कीमत OP_2 पर आपूर्ति का आधिक्य (SR) है। अतः कीमत घटने का दबाव बन जाता है (क्योंकि विक्रेताओं में अपना-अपना माल बेचने की स्पर्धा हो जाती है)।

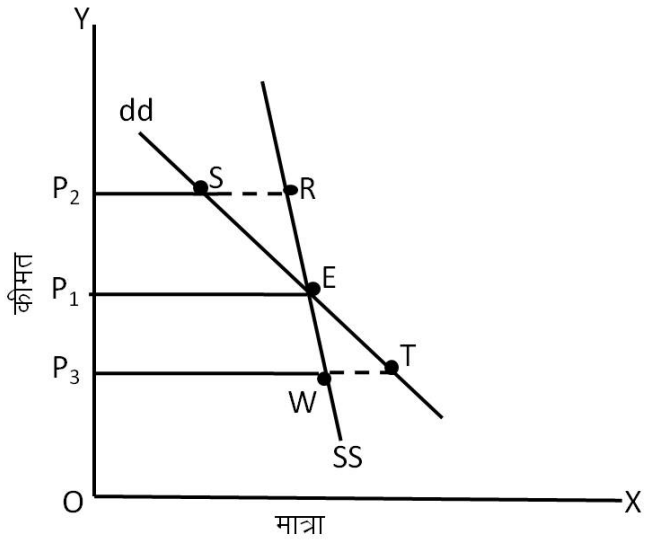

चित्र 3.4

दूसरी ओर, कीमत $OP_3 < OP_1$ होने पर मांग का आधिक्य WT दिखाई पड़ता है। यहां खरीदारों के बीच स्पर्धा कीमत को पुनः OP_1 तक बढ़ा देती है। अतः यहां भी संतुलन में स्थायित्व है।

ऐसे संतुलन को **वॉलरावादी संतुलन** भी कहते हैं। वॉलरा की 'स्थायित्व' की शर्त को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है :

संतुलन कीमत से ऊपर आपूर्ति वक्र को मांग वक्र से दाहिनी ओर होना चाहिए तथा संतुलन कीमत से नीचे आपूर्ति वक्र को मांग वक्र की बायीं ओर होना चाहिए।

एक बात पर विशेष ध्यान दें : मार्शल की समंजन प्रक्रिया में मात्राओं में परिवर्तन होता है किंतु वॉलरा की समंजन प्रक्रिया कीमत में परिवर्तन के सहारे चलती है।

3.3 मांग और आपूर्ति वक्र में परिवर्तन (खिसकाव) के संतुलन पर प्रभाव

तुलनात्मक स्थैतिकी में हम एक संतुलन की अवस्था से विश्लेषण का प्रारंभ करते हैं और वहीं से उस परिवर्तन को दर्शाते हैं जिसके प्रभाव का अध्ययन करना है। परिणामस्वरूप प्राप्त नई संतुलन अवस्था की मूल संतुलन से तुलना की जाती है। अन्य बातें स्थिर रहने पर दोनों संतुलनों के बीच का अंतर हमारे उक्त परिवर्तन का परिणाम होना चाहिए।

1) मांग वक्र का खिसकाव (परिवर्तन)

आपूर्ति वक्र पूर्ववत् रहने पर केवल मांग वक्र में होने वाले खिसकावों के संतुलन कीमत और संतुलन मात्रा पर प्रभाव चित्र 3.5 में दर्शाए गए हैं।

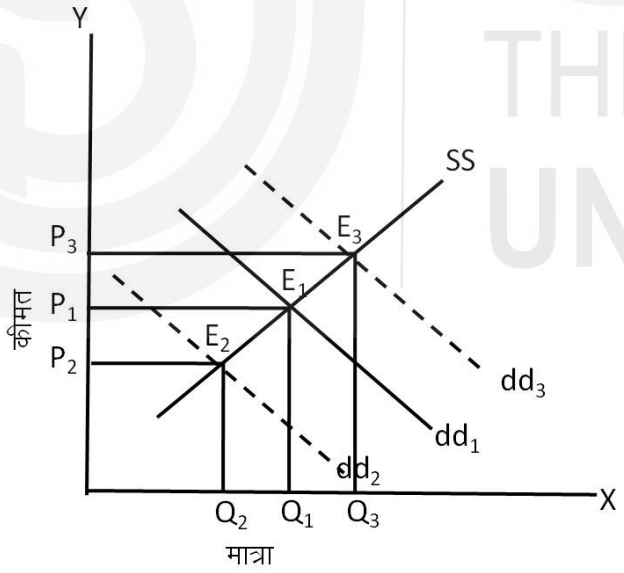

चित्र 3.5

यहाँ मांग में वृद्धि के परिणाम होंगे :

- संतुलन कीमत में वृद्धि; और
- संतुलन मात्रा में वृद्धि।

इसके विपरीत यदि मांग में कमी आए तो परिणाम होंगे :

- संतुलन कीमत में कमी; और
- संतुलन मात्रा में कमी।

2) आपूर्ति वक्र का खिसकाव (परिवर्तन)

मांग वक्र अपरिवर्तित रहने पर केवल आपूर्ति वक्र में परिवर्तन के भी संतुलन कीमत और संतुलन मात्रा, दोनों पर प्रभाव होंगे (देखें चित्र 3.6)।

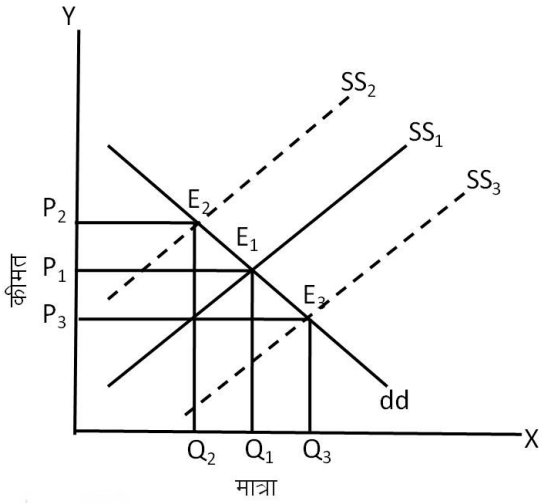

चित्र 3.6

यहां आपूर्ति में वृद्धि के परिणामस्वरूप होती है :

- संतुलन कीमत में गिरावट, और
- संतुलन मात्रा में वृद्धि।

इसके विपरीत आपूर्ति में कमी के कारण होती है :

- संतुलन कीमत में वृद्धि; और
- संतुलन मात्रा में कमी।

3) मांग और आपूर्ति में एक साथ परिवर्तन

आइए, अब उस स्थिति पर विचार करें, जहां मांग और आपूर्ति वक्रों में एक साथ परिवर्तन (खिसकाव) आ रहे हों। यहां सम्मिलित प्रभाव भी पूर्ववर्ती दो उदाहरणों के मिले-जुले स्वरूप होंगे।

निवल प्रभाव तो मांग और आपूर्ति के सापेक्ष परिवर्तन पर निर्भर करेंगे। हम विभिन्न संभावित परिणाम इस प्रकार बता सकते हैं :

जब मांग एवं आपूर्ति में से केवल एक वक्र परिवर्तित हो तो कीमत P तथा मात्रा Q पर प्रभाव इस प्रकार होते हैं :

- मांग में वृद्धि (दाहिनी ओर खिसकाव) P और Q में वृद्धि कर देती है।
- मांग में कमी (बायीं ओर खिसकाव) P और Q में कमी कर देती है।
- आपूर्ति में वृद्धि (दाहिनी ओर खिसकाव) P में कमी और Q में वृद्धि करती है।

किंतु जब मांग एवं आपूर्ति वक्रों में से एक साथ परिवर्तन हो तो उनके परिवर्तनों की सापेक्ष गहनता के विषय में जानकारी के बिना प्रभावों की विवेचना असमंजसपूर्ण रहती है।

यदि मांग और आपूर्ति, दोनों में वृद्धि (दाहिनी ओर खिसकाव) हो तो मात्रा में वृद्धि सुनिश्चित रहती है– कीमत में वृद्धि, कमी या स्थिरता के विषय में चर्चा अधिक जानकारी के आधार पर ही संभव है। यदि मांग में कमी (बायीं ओर खिसकाव) और आपूर्ति में वृद्धि (दाहिनी ओर खिसकाव) हो तो मात्रा में कमी सुनिश्चित होगी। कीमत में वृद्धि, कमी और स्थिरता का विवेचन अधिक जानकारी पर आधारित होगा।

3.3.1 संतुलन का निर्धारण : एक गणितीय प्रस्तुति

हम एक आंकड़े आधारित उदाहरण से चर्चा प्रारंभ कर रहे हैं।

$$q^d = 100 - 2p \quad (1)$$

$$q^s = 3p \quad (2)$$

$$q^d = q^s \quad (3)$$

हम इस समीकरण समुदाय को हल करने के लिए (1) तथा (2) को (3) में प्रतिस्थापित कर देते हैं। अतः

$$100 - 2p = 3p = 100 = 3P + 2P$$

अथवा $5p = 100$

अथवा $p = 20$

'p' का यह मान (1) में रखकर हम पाते हैं :

$$q^d = 100 - 2(20)$$

$$q^d = 60$$

अथवा $q^s = q^d = 60$

आइए, अब मांग वक्र को दाहिनी ओर खिसका कर देखें। कीमत स्थिर होने पर भी उपभोक्ता 60 अधिक इकाइयाँ मांगने लगे हैं। अतः

$$q^d = 160 - 2p$$

अब (1) तथा (2) को (3) में रखने पर : $p = 32$ और $q^d = q^s = 96$.

हम इसी प्रकार समीकरणों को हल कर सकते हैं।

किंतु बीजगणित की विधियों से हम किसी भी ऐसे समीकरण समुच्च्य का समाधान ज्ञात कर सकते हैं। यहां हम अंकों के स्थान पर **प्राचलों** (parameters) को स्थापित कर रहे हैं :

$$q^d = a + bp,\ a > 0,\ b < 0 \quad (4)$$

$$q^s = c + dp,\ c < a,\ d > 0 \quad (5)$$

$$q^d = q^s \quad (6)$$

प्राचलों पर लगाए गए प्रतिबंध यह सुनिश्चित कर देते हैं कि शून्य कीमत पर भी एक ''धनात्मक'' मात्रा ($a > 0$) की मांग होती है, मांग वक्र का ढाल ऋणात्मक है और आपूर्ति वक्र का ढाल धनात्मक है। प्राचल 'c' पर लगाया गया प्रतिबंध कुछ अधिक जटिल है। यदि ($c < 0$) तो किसी भी धनात्मक आपूर्ति के लिए धनात्मक कीमत आवश्यक होगी। यदि ($c > 0$) तो कीमत शून्य होने पर कुछ न कुछ इकाइयों की आपूर्ति हो रही होगी। इसका अर्थ होगा कि हम चाहते हैं कि शून्य कीमत पर आपूर्ति को मात्रा मांग की मात्रा से कुछ कम रहे ($a > c$)। तभी हमें धनात्मक संतुलन कीमत की प्राप्ति हो

पाएगी। यदि $c > a$, तो शून्य कीमत पर भी आपूर्ति मांग से अधिक होगी। इस अवस्था में तो हमारे रेखीय समीकरण समूह का समाधान किसी ऋणात्मक कीमत पर ही संभव होगा। इससे बचने के लिए हमें अतिरिक्त शर्त लगानी पड़ती है कि जब भी $c > a$ तो $p = 0$ होगा।

एक बार फिर, हम समाधान का आकलन करने के लिए समीकरण (4) और (5) को समीकरण (6) में रखकर आगे बढ़ते हैं। अतः हमें प्राप्त होता है :

$$a + bp = c + dp$$

सरल बीजगणितीय क्रिया से हम पा सकते हैं :

$$p = \frac{a-c}{d-b} \qquad (7)$$

अब तो किसी भी अंकगणितीय उदाहरण में से हम प्राचलों के मान सीधे ही इस सूत्र {समीकरण (7)} में रखकर आकलन कर सकते हैं।

3.3.2 संतुलन की विलक्षणता और बहुलता

अभी तक हम ऐसी अवस्थाओं पर चर्चा कर रहे थे जहाँ एक विलक्षण या 'अनूठा' संतुलन ही स्थापित हो पाता है। अर्थात् एक कीमत विशेष पर किसी एक मात्रा ही संतुलन की अवस्था का निर्माण करती है।

आइए अब उन दशाओं पर विचार करें जहां एक कीमत एक मात्रा का यह संबंध विच्छिन्न हो जाता है, अर्थात् उपभोक्ता किसी एक कीमत पर कई मात्राओं की खरीदारी के लिए अथवा किसी एक मात्रा के लिए एक से अधिक कीमतें चुकाने को तत्पर दिखाई देता है। इन स्थितियों को चित्र 3.7 और 3.8 में दिखाया गया है।

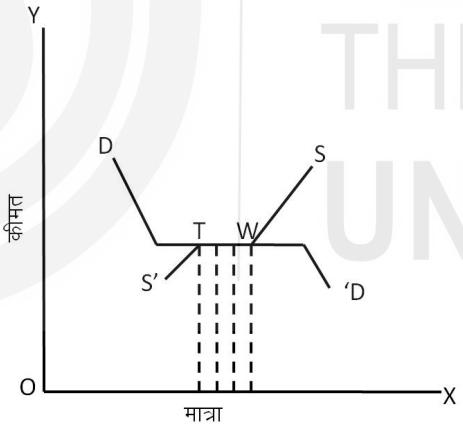

चित्र 3.7

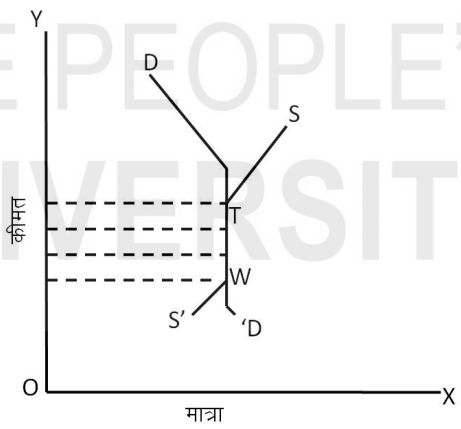

चित्र 3.8

एक बात पर विशेष ध्यान दें – चित्र 3.7 में मांग एवं आपूर्ति वक्रों के क्षैतिज रैखिक खंड विद्यमान हैं। परिणामस्वरूप हम एक निर्विवादित या विलक्षण कीमत स्तर का तो निर्धारण कर लेते हैं किंतु मांग-आपूर्ति की संतुलन मात्रा को लेकर संशय बना रहता है। यह T से W तक किसी भी बिंदु पर हो सकती है।

चित्र 3.8 उस अवस्था को दिखा रहा है जहां मांग एवं आपूर्ति वक्रों में उर्द्धव रैखिक खंड हैं। यहां पर हम संतुलन मात्रा तो सहज ही जान लेते हैं किंतु कीमत निश्चित नहीं रह पाती। उसका मान T से W के बीच कहीं भी हो सकता है।

बोध प्रश्न 1

1) इन मांग एवं आपूर्ति फलनों के आधार पर बाज़ार में संतुलन की दशा में कीमत और मात्रा का आकलन करें :
$q^s = -5 + 3P$, $q^d = 10-2P$

.....

.....

.....

2) इन समीकरणों के आधार पर संतुलन कीमत और मात्रा आकलित करें :
$q^d = 6-P$, $q^s = 3P-2$

.....

.....

.....

3) बताएं कि ये कथन **सत्य** हैं या **असत्य** –

i) सभी मांग वक्रों के ढाल धनात्मक होते हैं।

ii) कीमतों में परिवर्तन तभी होते हैं जब मांग आधिक्य हो, या आपूर्ति आधिक्य हो।

iii) यदि मांग आधिक्य हो तो कीमतें गिरने लगती हैं।

iv) वॉलरा संतुलनकारी प्रक्रिया मात्रा में परिवर्तन के माध्यम से कार्य करती है।

v) मांग और आपूर्ति दोनों ही वक्रों के दाहिनी ओर खिसकने पर मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

4) बाज़ार में 1000 व्यक्ति X वस्तु की मांग कर रहे हैं और सभी के वैयक्तिक मांग फलन है $q^d = 12-2P$ । साथ ही, इस बाज़ार का उस वस्तु के 100 उत्पादक हैं जिनके आपूर्ति फलन $q^s = 20P$ के समान हैं। बाज़ार कीमत तथा क्रय-विक्रय की गई मात्रा का आकलन करें।

3.4 माँग और आपूर्ति : कुछ अनुप्रयोग

3.4.1 राशनिंग और दुर्लभ वस्तुओं का आवंटन

राशनिंग का अर्थ है कीमत नियंत्रण लागू करना। इसका अर्थ है कि कीमत नियंत्रण आदेश के अंतर्गत आने वाली वस्तुओं पर कोई अधिकतम कीमत सीमा लागू कर दी गई है। ऐसी सीमा लागू करने का अभिप्राय है कि मांग और आपूर्ति की शक्तियों को स्वतंत्रतापूर्वक कार्य नहीं करने दिया जा रहा।

आइए देखते हैं कि ऐसी स्थिति में क्या होगा? यहां हम चित्र 3.9 की सहायता ले रहे हैं। DD और SS किसी वस्तु के प्रारंभिक मांग और आपूर्ति वक्र है। संतुलन बिंदु R है जिस पर OP कीमत पर OQ मात्रा की मांग और आपूर्ति हो रही है। मान लें कि अब सरकार बाज़ार की शक्तियों के स्वच्छंद व्यवहार में हस्तक्षेप करना चाहती है, अर्थात् वह कीमत पर नियंत्रण लगाना चाहती है। हमने पहले भी कहा है कि कीमत नियंत्रण मूलतः उच्चतम कीमत निर्धारित कर देना ही है। यह उच्चतम कीमत तीन प्रकार से तय की जा सकती है : (क) संतुलन कीमत से उच्च स्तर पर, मान लें कि OK > OP पर; (ख) संतुलन कीमत OP के समान ही; और (ग) संतुलन कीमत से कम स्तर पर OH < OP पर।

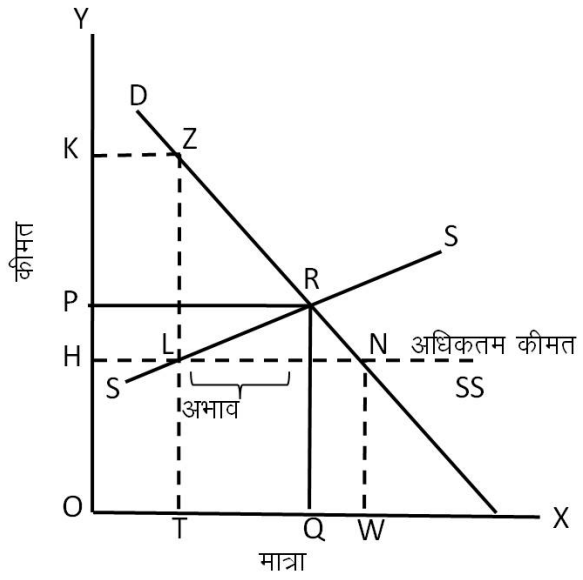

चित्र 3.9

- संतुलन कीमत से अधिक उच्चतम कीमत का बाज़ार के व्यवहार पर कोई प्रभाव नहीं होगा। इस कीमत OK पर उपभोक्ता तो OT मात्रा ही खरीदना चाहेंगे किंतु उत्पादक इससे बहुत ज्यादा मात्रा बेचने को तैयार बैठे होंगे। अतः कीमत में गिरकर पुनः संतुलन स्तर OP पर पहुँचने की प्रवृत्ति आ जाएगी।

- यदि उच्चतम कीमत बाज़ार की संतुलन कीमत के समान ही हो तो बाज़ार पूरी तरह उसके आदेश के प्रभाव से मुक्त रह जाता है।

- यदि उच्चतम कीमत का स्तर संतुलन कीमत से कम रखी जाए तो उन परिस्थितियों का निर्माण हो जाता है जिन पर और ध्यान दिए जाने की आवश्यकता होगी। चित्र 3.9 में OH < OP ऐसी ही स्थिति है। अब संतुलन कीमत OP विधि मान्य नहीं रही है। कीमत OH पर मांग की मात्रा तो बढ़कर HN = OW हो जाएगी। किंतु इस कीमत पर उत्पादक केवल HL = OT मात्रा बेचने को उत्सुक होंगे। परिणामस्वरूप बाज़ार में एक 'अभाव' (मांगी गई मात्रा – आपूर्ति की मात्रा) उभर आएगा। इसे हमने रेखांश LN द्वारा दर्शाया है।

हम स्वतंत्र बाज़ार में कीमत नियंत्रण के प्रभावों को लेकर इन निष्कर्षों तक पहुँचते हैं : यदि अधिकतम कीमत संतुलन कीमत के समान या अधिक रखी जाए तो या तो बाज़ार अप्रभावित रहेगा या फिर बाज़ार में वस्तु का अभाव होगा– उसका संतुलन स्तर से कम उत्पादन होगा जिसे संतुलन कीमत से कम दाम पर बेचा/खरीदा जाएगा। संतुलन स्तर से कम नियंत्रण कीमत लागू करने के ये परिणाम होंगे :

1) **अभाव** : बाज़ार में वस्तु की बेची/खरीदी गई मात्रा में संकुचन होगा। परिणामस्वरूप, उपभोक्ता वर्ग की मांग का एक बड़ा हिस्सा 'अतृप्त' रहेगा। यही स्थिति चित्र 3.9 में दर्शाई गई है।

2) **सीमित आपूर्ति के बहुत से उपभोक्ताओं के बीच आवंटन की समस्या** : जैसा हमने पहले ही देख लिया है, जो उपभोक्ता सरकार द्वारा घोषित कीमत पर ही खरीदारी करना चाहते हैं उन्हें अपनी मांग के अनुरूप मात्रा में वह वस्तु नहीं मिल पाएगी। दूसरे शब्दों में, वस्तु के बहुत से संभावित उपभोक्ता उससे वंचित रह जाएंगे।

अतः प्रश्न उठता है कि सीमित आपूर्ति का बहुत से उपभोक्ताओं के बीच किस प्रकार बंटवारा किया जाए।

एक तरीका तो वह बंटवारा करना खुदरा दुकानदारों के जिम्मे छोड़ देना हो सकता है। हम अपने देश में कितनी ही बार घासलेट (मिट्टी का तेल), खाद्य तेल, चीनी, प्याज आदि की दुर्लभता देख चुके हैं। सामान्यतः उपभोक्ता स्थानीय दुकानदारों के रहम के भरोसे रह जाते हैं। वे कितनी ही बार अपने नियमित ग्राहकों को अन्य से पहले आपूर्ति करते दिखाई देते हैं।

अन्य ग्राहकों के विषय में 'पहले आओ पहले पाओ' की नीति अपनाई जा सकती है। परिणाम होता है दुकानों के बाहर लंबी-लंबी अनियंत्रित कतारें– जिनके अंत के छोर पर खड़े ग्राहकों को प्रायः कुछ भी सामग्री नहीं मिल पाती। नियंत्रित वस्तु के स्वतंत्र बाज़ार में बिकने पर होने वाली इन्हीं कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए प्रायः सरकार कीमत नियंत्रण के साथ-साथ खरीदारी की मात्रा पर भी नियंत्रण लगाने को विवश हो जाती है। इस प्रकार राशनिंग से उस वस्तु के उपभोग से समाजव्यापी स्तर पर संभव सकल उपभोगिता में वृद्धि हो सकती है। ऐसी दशा में राशनिंग के ही 'पहले आओ पहले पाओ' वितरण विधि का विकल्प बनकर उभरने की संभावना अधिक होगी।

हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं :

जहाँ भी 'पहले आओ पहले पाओ' या विक्रेता की वरीयता के आधार पर वस्तुओं के वितरण के प्रति असंतोष की भावना होगी वहीं पर प्रभावी उच्चतम कीमत व्यवस्था किसी केंद्रीय (प्रशासकीय) राशन व्यवस्था के पक्ष में बहुत प्रबल दबाव भी बन जाएगा।

3) **काला बाज़ारी** : यह कीमत नियंत्रण का एक सीधा परिणाम होती है। यह नियंत्रणाधीन वस्तु की ग़ैर-कानूनी ढंग से विविध संगत उच्चतम से अधिक कीमत पर बिक्री का ही नाम है।

इस अवस्था के लिए दो कारण उत्तरदायी रहते हैं : (i) वस्तु को पाने के इच्छुक उपभोक्ताओं की संख्या उपलब्ध परिमाण की अपेक्षा बहुत विशाल है, और (ii) ऐसे उपभोक्ता भी हैं जो सरकार द्वारा नियत कीमत से अधिक कीमत देने को तैयार हैं। यह दूसरा कारण ही काला बाज़ारी का जन्मदाता और उसे बनाए रखने वाला कारण सिद्ध होता है। चित्र 3.9 में OH नियत अधिकतम कीमत है। इस कीमत पर केवल OT मात्रा की बाज़ार में खरीद और बिक्री हो रही है। हम DD से देख सकते हैं कि इतनी मात्रा (OT) तो उपभोक्ता T = OK कीमत पर भी खरीदने को तैयार थे (यह कीमत तो नियत अधिकतम और संतुलन की कीमत से काफी अधिक है। इस कारण जो व्यक्ति नियत कीमत से अधिक भुगतान करने का तैयार हो वे वस्तु के बिना काम चलाने के स्थान पर हेराफेरी करना (काले बाज़ार में खरीदना) बेहतर मान लेते हैं, क्योंकि स्वतंत्र बाज़ार वितरण की कोई भी प्रणाली उन्हें उनकी वांछित मात्रा में उस वस्तु को सुलभ नहीं करा पाती।

इस प्रकार हम एक दिलचस्प निष्कर्ष पर पहुंचते हैं :

अधिकारियों द्वारा कीमत नियत किए जाने पर बाज़ार में कालाबाज़ारी शुरू हो ही जाती है क्योंकि बहुत से उपभोक्ता नियत कीमत से अधिक चुकाने को तैयार होते हैं।

3.4.2 कीमत समर्थन के उपाय

कीमत समर्थन का अर्थ है कि निर्दिष्ट वस्तुओं के लिए सरकार ने अपने आदेश द्वारा न्यूनतम कीमत का निर्धारण कर दिया है।

इन वस्तुओं के उत्पादकों को अपना उत्पादन नियत न्यूनतम कीमत से कम पर बेचने की जरूरत नहीं रहती। इस प्रकार, न्यूनतम कीमत के नियत होने का अर्थ है कि बाज़ार में माँग और आपूर्ति की शक्तियों के स्वतंत्र रूप से कार्य करने में हस्तक्षेप किया जा रहा है। आइए, देखते हैं कि इस स्थिति में क्या होता है?

हम चित्र 3.10 में R द्वारा मांग एवं आपूर्ति वक्रों के प्रतिच्छेदन से निर्धारित कीमत OP तथा मात्रा (मांगी और बेची गई) OQ दिखा रहे हैं। मान लें कि सरकार कीमत समर्थन उपाय अपना रही है। इसका अर्थ है सरकार द्वारा न्यूनतम कीमत नियत किया जाना। यह न्यूनतम कीमत इन तीन विधियों के नियत की जा सकती है : (क) संतुलन कीमत से कहीं नीचे, OH जैसे किसी स्तर पर; (ख) संतुलन कीमत OP के समान; और (ग) संतुलन कीमत से ऊपर, OK जैसे किसी स्तर पर।

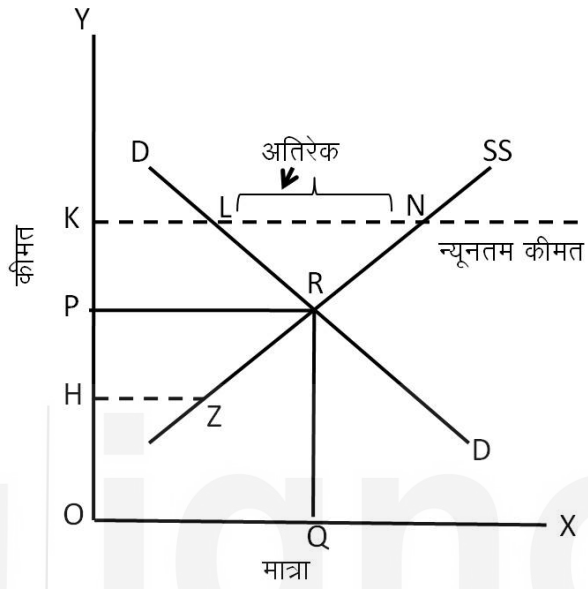

चित्र 3.10

न्यूनतम कीमत संतुलन कीमत से कम होने पर तो उस समर्थन उपाय का बाज़ार पर कोई प्रभाव नहीं होगा। कीमत OH पर HZ मात्रा की आपूर्ति होगी। किंतु हमारे उपभोक्ता तो इस मात्रा के लिए कहीं अधिक कीमत चुकाने को तत्पर हैं। अतः कीमत, अंततः, संतुलन कीमत की ओर अग्रसर हो जाएगी।

निम्नतम कीमत के संतुलन की कीमत* OP *के समान होने पर तो बाज़ार पूरी तरह से इस उपाय से अप्रभावित रह जाएगा।

न्यूनतम कीमत संतुलन कीमत* OP *से अधिक होने पर : बाज़ार पर निश्चित प्रभाव होंगे और उन पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होगी। मान लें कि चित्र 3.10 में सरकार ने न्यूनतम कीमत OK नियत कर दी है। अब संतुलन कीमत OP गैर-वैधानिक हो जाती है। विक्रेता को OK कीमत ही मिलनी चाहिए। किंतु इस उच्च कीमत पर तो मांग सिमट कर KL ही रह जाएगी। दूसरी ओर, उत्पादन वर्ग KN मात्रा की आपूर्ति करने को तैयार होंगे। यह तो बाज़ार में आपूर्ति अतिरेक की स्थिति को पैदा कर देगा– यह अतिरेक LN के समान है।

हम उपर्युक्त विवेचन से इस निष्कर्ष तक पहुँचते हैं : न्यूनतम कीमत को संतुलन कीमत या उससे निम्न स्तर पर रखने का बाज़ार पर कोई प्रभाव नहीं होगा किंतु संतुलन से उच्चतर कीमत नियत किए जाने से वस्तु की क्रय-विक्रय की मात्रा संतुलन स्तर से कम रह जाएगी। वस्तुतः बाज़ार में उसका अतिरेक दिखाई देगा।

संतुलन स्तर से उच्चतर न्यूनतम कीमत नियत करने के कीमत समर्थन उपाय के ये परिणाम होंगे :

1) **अतिरेक** : इस कीमत समर्थन के कारण वस्तु की वास्तविक खरीदारी कम हो जाएगी। परिणामस्वरूप उत्पादक के माल का एक बड़ा हिस्सा बिक नहीं पाएगा। इसी अवस्था को हमने चित्र 3.10 में KN द्वारा दिखाया है।

2) **सुरक्षित भण्डार** : ऐसे कीमत समर्थन उपाय के सफल बनाने के लिए सरकार को ऐसी व्यवस्था करनी होगी कि उत्पादक अपना अतिरिक्त माल बेच सके। ऐसा एक उपाय सुरक्षित भण्डार का निर्माण है। सरकार स्वयं उत्पादकों से बचा रह गया अतिरिक्त माल खरीद कर रख लेती है और जब कभी बाज़ार में कीमत समर्थित वस्तु की आगम कम होती है, उक्त भण्डार में से कुछ माल बाज़ार में लाया जा सकता है। ये सुरक्षित भण्डार कार्य सभी उत्पादकों को सामूहिक रूप से लाभ पहुँचाते हैं। किंतु इनकी लागत कौन भरता है? सबसे पहला वर्ग तो उपभोक्ताओं का है जिन्हें अधिक कीमत चुकानी पड़ती है। दूसरा वर्ग देश का जनसामान्य है जो इस कीमत समर्थन कार्य के लिए कर भरने को बाध्य रहता है।

3) **साहाय्य (subsidy)** : उपभोक्ता वर्ग को इस प्रकार होने वाली हानि की भरपाई करने के लिए सरकार उक्त कीमत समर्थन के मायम से एकत्र की गई मात्रा को साहाय्य युक्त (प्रापण कीमत से कम) कीमत पर उपभोक्ता वर्ग तक पहुँचा सकती है। खरीदारी और बिक्री कीमतों के बीच के अंतर का वहन सरकार करती है।

हम न्यूनतम-अधिकतम कीमतों की चर्चा के समापन से पहले आपको यह बता देना आवश्यक समझते हैं कि 'अतिरेक' और 'अभाव' के यहां प्रयुक्त विचारों की परिभाषा किसी न किसी कीमत विशेष के संदर्भ में ही की गई है।

3.4.3 न्यूनतम मज़दूरी विधेयन

न्यूनतम मज़दूरी नियत करना न्यूनतम कीमत नियत करने जैसा ही उपाय है। बहुत बार सरकारें साधन बाज़ार में भी हस्तक्षेप करती पाई गई हैं। कानून द्वारा सरकार रोज़गार दाताओं को इस प्रकार नियत की गई मज़दूरी दर से कम देने से रोक सकती है। इस न्यूनतम मज़दूरी तय करने का प्रभाव भी न्यूनतम कीमत के प्रभाव जैसा ही होगा। इसे हम चित्र 3.11 द्वारा दिखा रहे हैं।

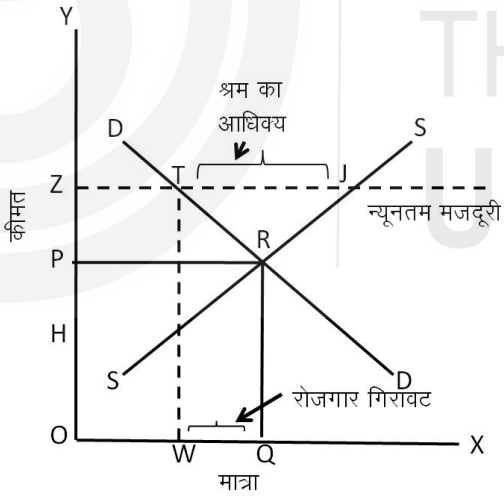

चित्र 3.11

चित्र 3.11 में संतुलन की स्थिति में OP मज़दूरी पर OQ के समान श्रम की मांग और आपूर्ति हो रही है। यदि सरकार OZ मज़दूरी नियत कर दे या श्रमिक संघों के साथ समझौते द्वारा ऐसा हो जाए तो इसके निम्न महत्त्वपूर्ण परिणाम होंगे :

1) जहां कानून प्रभावी ढंग से लागू होगा वहां रोज़गार पाने वाले श्रमिकों को दी गई मज़दूरी OP से बढ़कर OZ हो जाएगी।

2) न्यूनतम मज़दूरी से वास्तविक रोज़गार के स्तर में कमी आएगी, OZ मज़दूरी पर केवल ZT श्रमिकों की मांग होगी जबकि OP की संतुलन मज़दूरी दर पर तो OQ को रोज़गार मिल रहा था। रोज़गार में यहां आई गिरावट WQ है।

3) न्यूनतम मज़दूरी पर कार्य करने के इच्छुक उन श्रमिकों की संख्या को बहुत बढ़ा सकते हैं जिन्हें काम नहीं मिल पाता। यह श्रम का अतिरेक TJ के समान है।

4) कुछ श्रमिक विवश होकर सरकार द्वारा नियत न्यूनतम से कम मज़दूरी पर भी अपनी सेवाएं प्रदान करने लगते हैं। श्रम बाज़ार में कुछ चोरी-छिपे चलने वाली प्रक्रियाएं प्रारंभ हो जाती हैं।

3.4.4 अंतर्पण्य (Arbitrary)

इस प्रक्रिया में दो ऐसे बाज़ारों में जहां कीमतें समान नहीं हों एक ही साथ खरीदारी और बिकवाली होती है। ऐसा अंतर्पण्यकर्ता उक्त अंतर का लाभ उठाता है और उसका यही कार्य अंततः उस अंतर को समाप्त भी कर देता है।

एक उदाहरण : मान लें कि नई दिल्ली और नोएडा, दो बाज़ारों में ताज़ा खुम्ब (मशरूम) बिक रहे हैं। ये भौगोलिक दृष्टि से पृथक्कृत बाज़ार हम चित्र 3.12 में दिखा रहे हैं।

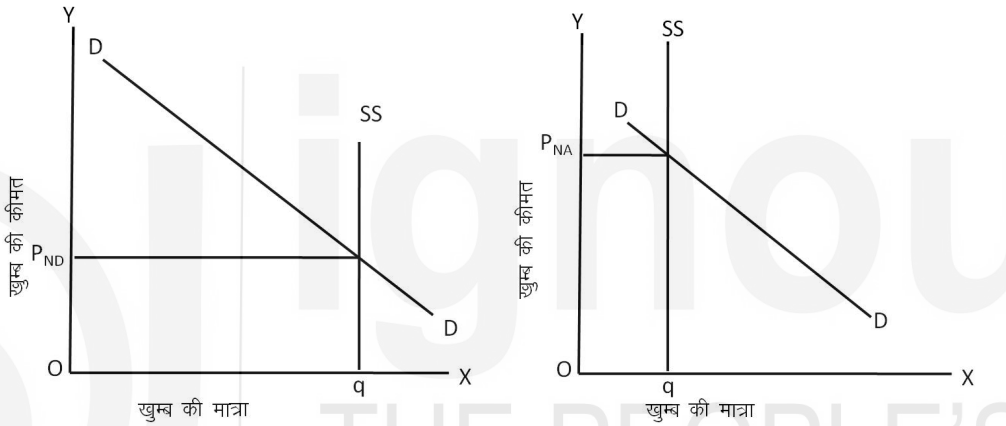

चित्र 3.12

नई दिल्ली (ND) और नोएडा (NA) अलग-अलग बाज़ार हैं और इनके अपने-अपने मांग एवं आपूर्ति वक्र हैं। दोनों आपूर्ति वक्र ऊर्द्धव बनाए हैं, अर्थात् वर्तमान में इन बाज़ारों में वस्तु की पूर्व निर्धारित मात्राएं ही उपलब्ध हैं। नई दिल्ली की संतुलन कीमत P_{ND} तथा नोएडा की P_{NA} है।

जब नई दिल्ली में कीमत काफी कम हो तो कोई भी ट्रक वाहक वहां से खरीदारी कर उस माल को नोएडा में बेच सकता है। जब तक नई दिल्ली और नोएडा की कीमतों में अंतर माल भाड़े से अधिक रहेगा ट्रक वाहक को ऐसे खरीदारी करने और बेचने का प्रोत्साहन बना रहेगा। जब नोएडा में बिक्री के लिए नई दिल्ली से खरीदारी होगी तो नई दिल्ली में कीमत में वृद्धि होगी तथा अधिक माल की आगम से नोएडा में कीमत में गिरावट आएगी। अतः नई दिल्ली से नोएडा को माल की रवानगी से इन दो स्थानों के बीच कीमतों का अंतर कम हो जाएगा। इसी प्रक्रिया को हम अंतर्पण्य का नाम देते हैं।

यह अंतर्पण्य प्रक्रिया उस समय थम जाएगी जब कीमतों के बीच अंतर परिवहन लागत के तुल्य या उससे भी कम रह जाता है। यदि दो नगरों के बीच परिवहन लागतें बहुत कम हों तो उनकी कीमतों के अंतर भी कम रह जाएंगे।

अंतर्पण्य से कीमतों का विचरण घट जाता है। सहजतापूर्वक ढोई जा सकने वाली वस्तुओं की कीमतों में भौगोलिक अंतर कम रहते हैं। इसी प्रकार जिन चीज़ों का भण्डारण सरल होता है उनकी कीमतों में मौसमी उच्चावचन कम रह जाते हैं। जब बाज़ार सुगठित हो और कीमतों के विषय में जानकारी तथा फोन की लाइनें (संपर्क) आसानी से मिल जाती हों तो अंतर्पण्य में सुविधा रहती है। कोई भी विक्रेता

अंतर्पण्यकर्ता भी बन सकता है, उसे यही तो तय करना होता है कि कब, कहां से खरीद कर बेचना है। किंतु यदि विभिन्न स्थानों पर कीमत की जानकारी पाना लागत भरा कार्य हो तो कीमत विचरण अधिक बना रहेगा।

एक विशेष उद्धरण

कुछ वर्ष पूर्व 'द न्यूयार्क टाइम्स' के मुख पृष्ठ पर केन्या के राष्ट्रपति का एक चित्र छपा था जिसमें उन्हें हाथियों के हत्यारों से जब्त किए गए हाथी दांत के ढेर को आग लगाते हुए दिखाया गया था। चित्र के साथ छपे वक्तव्य में कहा गया था कि यह अग्निदाह विश्व से हाथी दांत का व्यापार रोकने का आग्रह करने के लिए किया गया है। इस बात को लेकर तो संदेह बना रहेगा कि इस प्रकार के दहन से अपराधी मानसिकता वाले हत्यारों के मन पर कुछ प्रभाव हुआ या नहीं; किंतु इसका एक आर्थिक प्रभाव सहज ही स्पष्ट हो गया। इस दहन कार्य ने विश्व में हाथी दांत की आपूर्ति को घटाकर उसकी कीमत में उछाल ला दिया, अर्थात् ग़ैर-कानूनी हाथी हत्यारों को होने वाले लाभ में अवश्य वृद्धि कर दी। इससे वे और अधिक वध करने को उत्साहित होंगे। यह ऐसा कार्य उसके विपरीत है जिसे केन्या की सरकार करना चाहती थी।

3.4.5 कर के भार का विभाजन

आइए यह जानने का प्रयास करें कि इन परिस्थितियों में कर का भार कौन उठाता है :

क) जब मांग पूर्णतः लोचशील और आपूर्ति वक्र सामान्य स्वरूप के हों।

ख) जब मांग पूर्णतः लोचहीन किंतु आपूर्ति वक्र सामान्य स्वरूप के हों।

ग) जब आपूर्ति पूर्णतः लोचशील और मांग वक्र सामान्य स्वरूप के हों।

घ) जब आपूर्ति पूर्णतः लोचहीन किंतु मांग वक्र सामान्य स्वरूप के हों।

क) जब मांग वक्र पूर्णतः लोचशील होता है तो कर का पूरा भार उत्पादक को सहन करना पड़ता है। यही बात चित्र 3.13 में दिखाई जा रही है। कर पूर्व संतुलन E पर हो रहा था, जहां OP कीमत पर OQ_1 मात्रा का लेनदेन हो रहा था। किंतु कर लगने के बाद नया संतुलन E_1 पर होगा। जहां कीमत तो OP रहती है किंतु उसमें से एक बड़ा हिस्सा **कर** के रूप में सरकार के पास चला जाता है।

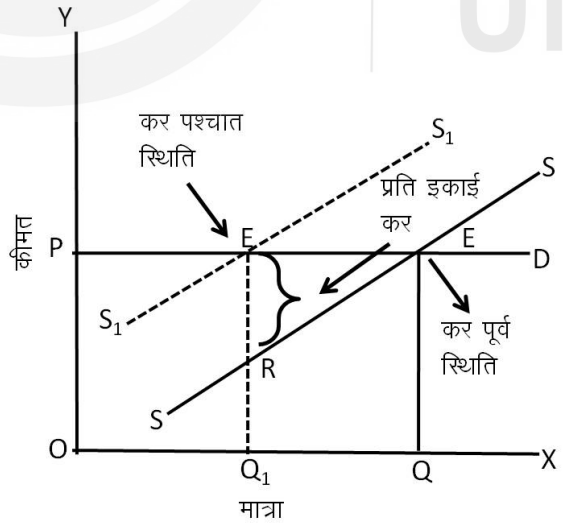

चित्र 3.13

ख) मांग वक्र के पूर्णतः लोचहीन होने की दशा में सारा कर भार उपभोक्ता को वहन करना होगा। यही बात चित्र 3.14 में दर्शाई गई है। कर पूर्व संतुलन E पर होगा जहां कीमत OP है। किंतु कर लगने पर नया संतुलन E_1 पर है और नई कीमत OP_1 जिसमें संपूर्ण कर भी सम्मिलित है।

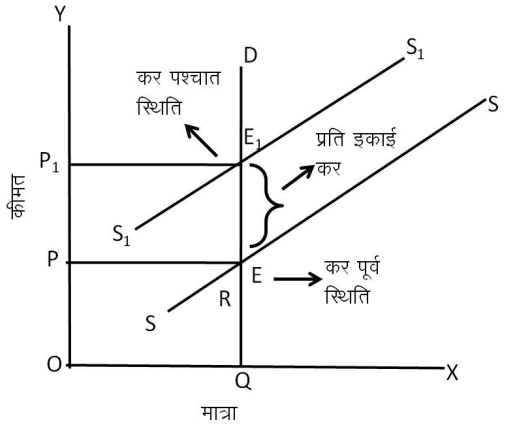

चित्र 3.14

ग) हमारा चित्र 3.15 में स्पष्ट कर रहा है कि आपूर्ति वक्र के पूर्णतः लोचशील होने की दशा में सारा कर भार उपभोक्ता को ही उठाना पड़ता है। यहां भी कर पूर्व संतुलन E पर कीमत OP है। कर पश्चात् नया संतुलन बिंदु E_1 है और कीमत OP_1 जिसमें पूरा कर भी शामिल हो गया है।

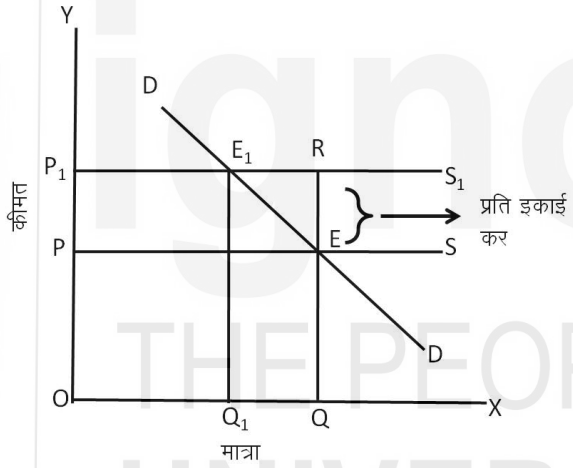

चित्र 3.15

घ) यहां आपूर्ति पूर्णतः लोचहीन है और जैसा कि हमारा चित्र 3.16 दर्शा रहा है, कर पश्चात् कीमत भी कर पूर्व कीमत OP के समान ही रहती है। अतः कर भार उत्पादक पर ही पड़ता है।

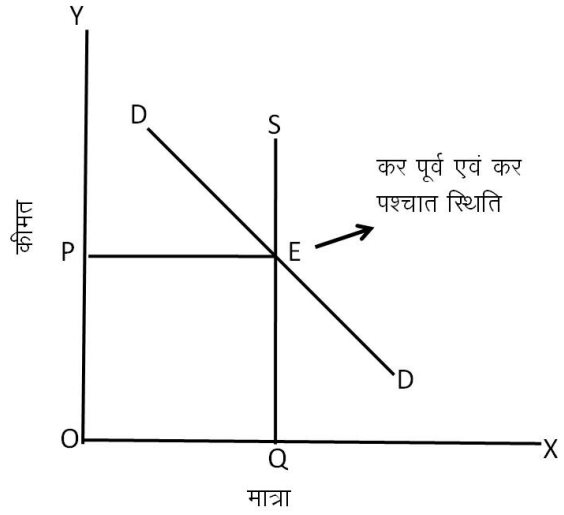

चित्र 3.16

- मांग जितनी अधिक लोचहीन होगी उतना अधिक भार उपभोक्ता को अंतरित होगा।

इस विचार को समझाने के लिए हम तीन अलग-अलग मांग वक्र ले रहे हैं, जिनके ढाल उनकी लोचशीलता के सूचक हैं। तुलना की सरलता के लिए चित्र 3.17 में ये तीनों मांग वक्र बिंदु E से गुज़र रहे हैं। कर आरोपण से आपूर्ति वक्र खिसक कर S_1S_1 हो जाता है। यह तीनों मांग वक्रों से क्रमशः A, B और C पर प्रतिच्छेदन कर तीन अलग-अलग कर पश्चात् संतुलन निर्धारित करता है (मांग वक्र D_1D_1, D_2D_2 तथा D_3D_3 है)। A, B और C से रेखा PE तक पहुंचने वाले लंब अब उपभोक्ता कीमत में हो रही वृद्धियों को दर्शाते हैं। ज़रा कीमत वृद्धि और मांग वक्र के ढाल के बीच संबंध पर तो ध्यान दें : मांग वक्र जितनी अधिक तीखे ढाल (अधिक लोचहीन) वाली होती है, कर का उतना ही अधिक अंश भार उपभोक्ता को भुगतना पड़ता है।

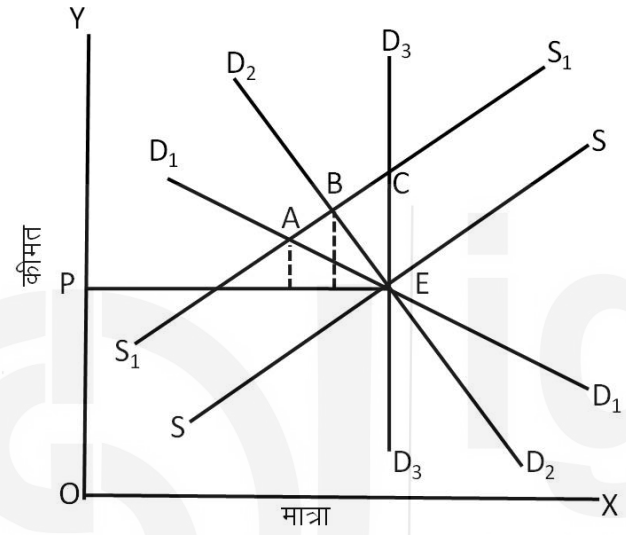

चित्र 3.17

बोध प्रश्न 2

1) मांग में वृद्धि के बावजूद निजी कंप्यूटरों की कीमतें निरंतर गिर रही हैं। व्याख्या करें।

.....

.....

.....

2) नई कारें 'सामान्य पदार्थ' होती हैं। मान लें कि किसी अर्थव्यवस्था में सशक्त आर्थिक प्रसार (वृद्धि) का दौर चल रहा है जिसमें व्यक्तियों की आयों में भारी वद्धि होती है) निर्धारित करें कि नई कारों की संतुलन कीमतों और संख्या (मात्रा) के संतुलन में क्या दिखाई देगा।

.....

.....

.....

3) बताइए कि कौन-सा कथन **सत्य** है और कौन-सा **असत्य**।

i) यदि उच्चतम कीमत संतुलन कीमत के समान हो तो बाज़ार प्रभावित होगा।

ii) न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम श्रमिकों के वास्तविक रोज़गार में कमी कर देता है।

iii) अंतर्पण्य कीमतों के विचरण को अधिक विस्तृत कर देता है।

iv) जब मांग पूर्णतः लोचशील होती है तो कर का सारा भार उपभोक्ता उठाता है।

4) मान लें कि नीति निर्माता पिज़्ज़ा की कीमत बहुत उच्च पा रहे हैं और उनका विचार है कि इस कारण पर्याप्त संख्या में लोग इसे नहीं खरीद पा रहे। परिणामस्वरूप वे पिज़्ज़ा पर एक अधिकतम कीमत लागू कर देते हैं, जो वर्तमान संतुलन कीमत से कम है। बताइए कि क्या उपभोक्ता अब पहले से अधिक पिज़्ज़ा खरीद पाएंगे?

.....

.....

.....

5) मान लें कि किसी वस्तु की मांग में अप्रत्याशित उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। बताइए कि सट्टे बाज किस प्रकार से वस्तु की कीमतों में उतार-चढ़ाव सीमित कर देते हैं?

.....

.....

.....

3.5 सार-संक्षेप

मांग और आपूर्ति के मूल विचारों की विवेचना हमें अपने दैनिक जीवन में अर्थशास्त्र की सार्थकता का बोध कराती है। बाज़ार कीमत वहाँ निर्धारित होती है जहां मांग की मात्रा आपूर्ति की मात्रा के समान होती है। मांग और आपूर्ति के अभिलक्षण एक अवस्था से दूसरी में, एक बाज़ार से दूसरे बाज़ार में भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। ये बाज़ार की शक्तियाँ कीमत और मात्रा को दीर्घकाल में प्रभावित करते हैं। मार्शल की संतुलन प्रक्रिया में मात्राओं में परिवर्तन होते हैं तो वॉलरा की प्रक्रिया कीमत में परिवर्तन पर आग्रह करती है।

संतुलन स्तर से कम उच्चतम कीमत के निर्धारण से आपूर्ति के अभाव और कालाबाज़ारी की समस्याएँ उभरती हैं जिनके समाधान के रूप में केंद्रीय रूप से संचालित राशन व्यवस्था की ज़रूरत पैदा हो जाती है। उच्च स्तर पर न्यूनतम कीमत नियत किए जाने से आपूर्ति के अतिरेक की समस्या का सामना करना पड़ता है और उस दशा में वस्तु का सुरक्षित भंडार बनाने तथा साथ ही उपभोक्ता को साहाय्य के माध्यम से सस्ते दामों पर वस्तुएं उपलब्ध कराने की व्यवस्था करना आवश्यक हो जाता है।

न्यूनतम मज़दूरी विधेयन न्यूनतम कीमत नियत करने जैसा ही उपाय है।

अंतर्पण्य से कीमतों के बीच विचरण परिसीमित हो जाता है।

3.6 संदर्भ ग्रंथादि

1) Case, Karl E. and Ray C. Fair, *Principles of Economics*, Pearson Education, New Delhi, 2015.

2) Stiglitz, J.E. and Carl E. Walsh, *Economics*, Viva Books, New Delhi, 2014.

3) Hal R. Varian, *Intermediate Microeconomics: A Modern Approach*, 8th edition, W.W. Norton and Company/Affiliated East-West Press (India), 2010.

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) $P = 3, q_d = 4$

2) $p = 2, q = 4$

3) i) असत्य ii) सत्य iii) असत्य iv) असत्य v) सत्य

4) $P = 3, q = 6000$

बोध प्रश्न 2

1) व्यक्तिगत कंप्यूटरों की कीमत इसलिए कम हुई है कि उनकी आपूर्ति में अपेक्षाकृत अधिक तीव्र वृद्धि हुई है।

2) सामान्य वस्तु होने के कारण आय में वृद्धि से नई कारों की मांग में वृद्धि होती है। अतः मांग वक्र दाहिनी ओर खिसक जाता है। परिणामस्वरूप संतुलन कीमत और मात्रा, दोनों में वृद्धि होती है।

3) i) असत्य ii) सत्य iii) असत्य iv) असत्य

4) अधिकतम कीमत नियत होने की अवस्था में उत्पादक कम माल बाज़ार में बेचना चाहेगा। उपभोक्ता कम पिज्जा उपभोग कर पाएंगे। बाज़ार में एक बड़ी अतृप्त मांग बनी रहेगी।

5) सट्टेबाज़ लाभ की संभावना से प्रेरित हो वस्तु खरीदते हैं। यदि बाज़ार में कीमत (भविष्य में अपेक्षित कीमत से) अधिक हो तो वे अपने स्टॉक में से माल बेच भी देते हैं। यदि वर्तमान कीमत भविष्य की संभावित कीमत से कम हो तो वे वस्तु को खरीद कर अपने भंडार में जमा कर लेते हैं।

लाभ का पहला सुयोग – अपेक्षित कीमत से वर्तमान कीमत का अधिक होना सट्टेबाज को माल बेचने को प्रेरित करता है– इससे वर्तमान कीमत में कमी होती है।

लाभ का दूसरा सुयोग – जब वर्तमान कीमत भविष्य की आशा से कम हो तो वह खरीदारी करता है। इससे वर्तमान कीमत में वृद्धि होती है।

इस प्रकार भविष्य की अपेक्षित कीमत के वर्तमान से अधिक होने पर खरीदारी तथा कम होने पर बिक्री से वर्तमान और भविष्य की कीमत में अंतर काफी कम हो जाते हैं।

इस प्रकार सट्टेबाज कीमत उच्चवचन कम कर उसके परिवर्तनों को कम कर देते हैं।

3.8 पाठांत प्रश्न

1) आपूर्ति और मांग फलन इस प्रकार है :

$Q^u - 100 - 5P$
$Q^s - 10 + 5P$

क) संतुलन कीमत और मात्रा का आंकलन करें।

ख) यदि सरकार न्यूनतम कीमत रु. 10 प्रति इकाई निर्धारित कर दे तो आपूर्ति कितनी होगी और मांग कितनी?

ग) यदि सरकार अधिकतम कीमत रु. 5 प्रति इकाई नियत कर दे, तो आपूर्ति और मांग क्रमशः कितनी इकाइयों की होगी?

घ) यदि मांग में वृद्धि होकर वह $Q^{dl} = 200 - 5P$ हो जाए तो नई संतुलन कीमत और मात्रा का आकलन करें।

2) इनके संभावित प्रभावों की विवेचना करें :

क) किराये पर अधिकतम सीमा के गृहखंडों के बाज़ार पर।

ख) गेहूँ की न्यूनतम कीमत का इसके बाज़ार पर।

माँग-आपूर्ति चित्रों का प्रयोग कर दर्शाएं कि दोनों बाज़ारों में क्या घटनाक्रम चलेंगे।

3) बेंगलुरु के पर्यटन नगर में टी-शर्ट के मांग और आपूर्ति वक्र इस प्रकार हैं :

$Q^d = 24,000 - 500\ P$

$Q^s = 6,000 + 1,000\ P$

क) बीजगणित विधि से कीमत और मात्रा का आकलन करें।

ख) यदि पर्यटकों को यह अनुभूति हो जाए कि उन्हें तो टी-शर्ट अच्छी नहीं लगती तो उनका मांग वक्र इनमें से कौन-सा हो सकता है?

$Q^d = 21,000 - 500\ P$

$Q^d = 27,000 - 500\ P$

माँग वक्र की खिसकन के बाद संतुलन कीमत और मात्रा का आकलन करें।

ग) यदि, इसके विपरीत नगर में दो और टी-शर्ट विक्रेता आ जाएं तो आपूर्ति वक्र इनमें से कौन-सा हो जाएगा?

$Q_s = 3,000 + 1,000\ P$

$Q = 9,000 + 1,000\ P$

आपूर्ति वक्र की इस खिसकन के बाद संतुलन कीमत और मात्रा ज्ञात करें।

4) किस अवस्था में मांग वक्र का खिसकना मुख्यतः मात्रा को प्रभावित करेगा और कब मुख्यतः कीमत को?

5) किस अवस्था में आपूर्ति वक्र का खिसकना मुख्यतः कीमत को प्रभावित करेगा और कब मुख्यतः मात्रा को?

6) मान लें कि पिज्ज़ा की बाज़ार मांग $Q^d = 300 - 20\ P$ और उसकी बाज़ार आपूर्ति $Q^s = 20\ P - 100$, जहाँ P = कीमत (प्रति इकाई)।

क) P का मान 5 से 15 तक रहते हुए पिज्ज़ा की मांग और आपूर्ति अनुसूचियां बनाइए।

ख) संतुलन की स्थिति में कितने पिज्ज़ा बेचे जाएंगे? किस कीमत पर?

ग) यदि आपूर्तिकर्ता पिज्ज़ा की कीमत को रु. 15 नियत कर दें तो बाज़ार में क्या समंजन प्रक्रिया चलेगी?

घ) मान लें कि पिज्ज़ा के एक प्रतिस्थापक, हैमबर्गर, की कीमत दुगुनी हो जाती है। इससे पिज्ज़ा की मांग दुगुनी हो जाती है (प्रत्येक कीमत पर उपभोक्ता दुगुने पिज्ज़ा मांगने लगते है)। अब पिज्ज़ा के लिए नए बाज़ार फलन का समीकरण लिखें।

च) पिज्ज़ा के लिए नई संतुलन कीमत और मात्रा का आकलन करें।

शब्दावली

अल्पकाल : वह अवधि जिसमें फर्म की कम से कम एक आगत (प्लांट का आकार) स्थिर है।

असामान्य लाभ (Supernormal profit) : जब कोई फर्म दीर्घकाल में संसाधनों को वर्तमान उपयोग में बनाए रखते हुए लाभ अर्जित करती है तो वह असामान्य लाभ होता है इस अवस्था में कीमत > औसत लागत।

अल्पाधिकार : सीमित प्रतिस्पर्धा की स्थिति, जिसके अंतर्गत बाज़ार बड़े उत्पादकों या विक्रेताओं द्वारा आपस में बाँट लिया जाता है।

असाधारण लाभ (Abnormal profit) : सामान्य लाभ से अधिक लाभ – जिसे असामान्य लाभ या एकाधिकारी लाभ भी कहा जाता है। फर्मों के प्रवेश में कठोर बाधाएँ होने के कारण एकाधिकारी फर्म द्वारा दीर्घकाल में अर्जित किया जाने वाला लाभ असाधारण लाभ होता है।

अतिरिक्त क्षमता : अतिरिक्त क्षमता एक ऐसी स्थिति है जहाँ फर्म का वास्तविक उत्पादन उसके द्वारा उत्पादित किए जा सकने वाले उत्पादन (अनुकूलतम/आदर्श उत्पादन) से कम होता है। इसका अर्थ कभी-कभी इससे भी लगाया जाता है कि उत्पाद की वास्तविक माँग उस स्तर से कम है जिसे कि व्यवसाय आपूर्ति करने की क्षमता रखता है।

अंतरण आय : किसी साधन को वर्तमान रोज़गार में रोके रखने के लिए पर्याप्त न्यूनतम भुगतान इसे अन्य सर्वोत्तम रोज़गार में प्राप्त हो सकने वाली आय के रूप में भी व्यक्त किया जाता है।

अपूर्ण प्रतियोगिता : अपूर्ण प्रतियोगिता उस समय उत्पन्न होती है जब किसी बाज़ार में, प्राक्कल्पिक या वास्तविक रूप से नवप्रतिष्ठित विशुद्ध या पूर्ण प्रतियोगिता के किसी अभिलक्षण या तत्व का उल्लघंन किया जाता है।

अनुकूलतम उत्पाद मिश्रण : अर्थशास्त्र में उत्पादन के अनुकूलतम मिश्रण को उपलब्ध संसाधनों, प्रौद्योगिकी एवं सामाजिक मूल्यों के साथ उत्पादन के सर्वाधिक वांछित संयोगों के रूप में व्यक्त किया जाता है।

अपूर्ण सूचना : ऐसी स्थिति जब किन्हीं वस्तुओं एवं सेवाओं के बारे में क्रेताओं और विक्रेताओं के पास उपलब्ध सूचना में एकरूपता नहीं होती।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार : दो विभिन्न राष्ट्रों के क्रेताओं एवं विक्रेताओं के बीच होने वाला व्यापार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है।

अनुकूलतम स्थिति : वह बिंदु जहां उत्पादन के विभिन्न साधनों का प्रयोग करते हुए उत्पादन के संभावित अधिकतम को प्राप्त किया जाता है।

अनुकूलतम स्थिति भंग : यह वह बिंदु है जहां अनुकूलतम स्थिति भंग हो जाती है, अर्थात् दिए गए संसाधनों से उत्पादन संभावित अधिकतम से कम हो जाता है।

अंतर्निहित लागतें : अंतर्निहित लागतें वे लागतें हैं जो फर्म के स्वयं के स्वामित्व वाले संसाधनों के प्रयोग से संबंधित हैं। क्योंकि ये साधन यदि किसी अन्य उत्पादन में प्रयोग किए जाएं तो ये संसाधन प्रतिफल प्रदान करते हैं। अतः इनका आरोपित मूल्य अंतर्निहित लागत का गठन करता है।

आर्थिक लाभ : फर्म के आगम में से आर्थिक लागत को घटाकर प्राप्त धनराशि।

आर्थिक लागत : आर्थिक लागत में लेखांकन लागत के साथ उत्पत्ति के साधन के अगले सर्वोत्तम विकल्प में प्राप्त प्रतिफल के समतुल्य अवसर लागत को शामिल किया जाता है।

आर्थिक लगान : किसी आगत के स्वामी को प्राप्त वह अतिरेक जो उसे आगत को किसी फर्म को प्रदान करने के लिए न्यूनतम धनराशि से ऊपर प्राप्त होता है।

आय प्रभाव : उपभोक्ता की वास्तविक आय में परिवर्तन द्वारा प्रेरित वस्तु या सेवा की मांग में परिवर्तन है।

कीमत में कोई भी वृद्धि या कमी के अनुरूप/ परिणामस्वरूप उपभोक्ता की वास्तविक आय में कमी होती है या वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप उसी वस्तु या अन्य वस्तु के या सेवा के लिए मांग कम या अधिक होती है।

आय की असमानताएं : किसी अर्थव्यवस्था में विभिन्न आय वर्गों के बीच आय का वितरण।

आपूर्ति में वृद्धि : किसी वस्तु की दी हुई कीमत पर वस्तु की आपूर्ति में वृद्धि हो जाना।

आपूर्ति अनुसूची : दो कॉलम वाली तालिका जो विभिन्न कीमतों पर आपूर्ति की मात्रा को प्रदर्शित करती हैं।

आपूर्ति वक्र : अन्य बातें समान रहने पर एक निश्चित समयावधि में वस्तु की विभिन्न कीमतों पर आपूर्ति की मात्राओं के संबंध को प्रदर्शित करने वाला वक्र।

आगमनात्मक तर्कशैली : ऐसी विश्लेषण पद्धति जिसमें तथ्याधारित जानकारी का प्रयोग कर विभिन्न शक्तियों/संप्रेरणाओं के प्रति आर्थिक इकाइयों के व्यवहार के सांझे सूत्रों की पहचान होती है।

आपूर्ति : वस्तु की वह मात्रा जो उसकी किसी कीमत विशेष पर प्रत्येक समयावधि में बेचने के लिए विक्रेता तत्पर होते हैं।

आवश्यक वस्तुएँ : जीवन धारण की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने वाली वस्तुएँ।

आर्थिक नियम : प्रवृत्तियों विषयक कथन। ये विभिन्न शक्तियों/संप्रेरणाओं के फलस्वरूप अधिक अभिकर्ताओं की मानक या सामान्य प्रतिक्रियाएँ बताते हैं।

आर्थिक लागत : आर्थिक लागत से अभिप्राय फर्म द्वारा उत्पादन में आर्थिक संसाधनों के उपयोग की लागत से है जिसमें अवसर लागत भी शामिल है।

आंतरिक मितव्ययताएं : वे मितव्ययताएं जो फर्म को अपने आकार का विस्तार करने पर प्राप्त होती हैं उन्हें आंतरिक मितव्ययताओं के तौर पर जाना जाता है।

आंतरिक अपमितव्ययताएं : जब उत्पादन के पैमाने में लगातार विस्तार किया जाता है, फर्में एक ऐसे बिंदु पर पहुंच जाती हैं जहां उत्पादन में वृद्धि, उत्पादन के साधनों में वृद्धि की तुलना में कम होती है। इस बिंदु पर आंतरिक अपमितव्ययताएं लागू हो जाती हैं ।

आयताकार परवलय : ऐसा वक्र जिसके किसी भी बिंदु से उसके नीचे बनाए गए आयतों के क्षेत्रफल एकसमान हों।

आपूर्ति में कमी : किसी वस्तु की दी हुई कीमत पर वस्तु की आपूर्ति में कमी आ जाना।

आपूर्ति की लोच : कीमत परिवर्तन के प्रति आपूर्ति की मात्रा की संवेदनशीलता।

आपूर्ति का विस्तार : किसी वस्तु की पूर्ति में वृद्धि के फलस्वरूप वस्तु की आपूर्ति में वृद्धि।

आवंटनात्मक दक्षता (Allocative efficiency) : उपभोक्ताओं की माँग पर वस्तुओं/सेवाओं का उत्पादन उस कीमत पर करना जो पूर्ति की सीमांत लागत को दर्शाती है।

आवंटनात्मक दक्षता : आवंटनात्मक दक्षता किसी अर्थव्यवस्था के लिए वह अवस्था है जहाँ उत्पादन उपभोक्ता प्राथमिकताओं को इस प्रकार व्यक्त करता है कि प्रत्येक वस्तु एवं सेवा का उत्पादन उस बिंदु या स्तर तक किया जाता है जहाँ अंतिम इकाई उपभोक्ताओं को जो सीमांत लाभ प्रदान करती है वह उत्पादन की सीमांत लागत के बराबर होता है। एकल कीमत मॉडल में आवंटनात्मक दक्षता के बिंदु पर वस्तु अथवा सेवा की कीमत उसकी सीमांत लागत के बराबर होती है।

आभासी लगान : किसी साधन की औसत लागत से ऊपर उत्पत्ति के किसी साधन को प्राप्त होने वाली आय। यह एक अल्पकालीन अवधारणा है।

उत्पाद विभेद : सामान्य तौर पर एक-दूसरे से मिलती-जुलती लेकिन किसी न किसी आधार पर भिन्नता रखने वाली वस्तुओं की बिक्री। उपभोक्ताओं को इन्हीं में से अपनी पसंद तय करनी होती है।

उत्पादक दक्षता : उत्पादक दक्षता एक ऐसा आर्थिक स्तर है जहाँ अर्थव्यवस्था में किसी अन्य वस्तु के उत्पादन में कमी लाए बिना किसी वस्तु के उत्पादन में वृद्धि नहीं की जा सकती। यह स्थिति उसी अवस्था में उत्पन्न होती है जब अर्थव्यवस्था उत्पादन संभावना सीमा पर होती है।

उत्पादन संभावना वक्र : किसी अर्थव्यवस्था में दो वस्तुओं/सेवाओं के उन संयोजनों को व्यक्त करने वाला वक्र जिन्हें समाज अपने संसाधनों के दक्षतापूर्ण प्रयोग करते हुए उत्पादित कर सकता है।

उत्पादन फलन : वह तकनीकी नियम जो, साधन आगतों तथ निर्गत के बीच संबंध को व्यक्त करता है, उत्पादन फलन कहलाता है।

उपभोक्ता संतुलन : वह बिंदु जिस पर एक उपभोक्ता दी गई आय तथा कीमतों के प्रतिबंधों के अंतर्गत वस्तुओं एवं सेवाओं की खरीद से अनुकूलतम उपयोगिता या संतुष्टि पर पहुँचता है।

उपभोग : किसी आवश्यकता की संतुष्टि की प्रक्रिया में वस्तुओं में अंतर्निहित उपयोगिता का प्रयोग।

उपयोगिता : वस्तुओं की आवश्यकताएँ पूर्ण कर पाने की क्षमता। यह उपभोक्ता को किसी चीज़ से मिली संतुष्टि या सेवा ही है।

एकाधिकार : वस्तु के कोई निकट स्थानापन्न नहीं होने की दशा में किसी वस्तु का एकमात्र उत्पादक (विक्रेता) होना।

एकाधिकारिक प्रतियोगिता : अनेक फर्में एक-दूसरे से मिलता-जुलता लेकिन विभेदीकृत वस्तुओं का उत्पादन करती हैं जो एक-दूसरे के निकट स्थानापन्न होते हैं। दूसरे शब्दों में, अधिक संख्या में विक्रेता फर्म लगभग एक जैसी (लेकिन एकसमान नहीं), वस्तुएँ बेचती हैं तथा कीमत और अन्य कारकों में एक-दूसरे से प्रतियोगिता करती हैं।

सीमांत आगम उत्पाद (एम.आर.पी.) : सीमांत आगम उत्पाद अर्थात् सीमांत आगम एवं साधन के सीमांत उत्पाद का गुणनफल।

एकाधिकारी : किसी वस्तु की संपूर्ण आपूर्ति पर नियंत्रण रखने वाला उत्पादक।

ऐतिहासिक लागत : ऐतिहासिक लागत वह लागत है जो संपत्ति को क्रय करते समय वास्तव में व्यय हो चुकी है।

औसत उत्पाद : जब कुल उत्पाद को प्रयोग की गई आगत की इकाइयों की संख्या से भाग किया जाता है वह औसत उत्पाद है।

कटक (रिज) रेखाएं : उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र की सीमाओं का निर्धारण करने वाली रेखाओं को कटक (रिज) रेखाओं के रूप में जाना जाता है।

कीमत विभेद (Price discrimination) : जब कोई फर्म लागत से कोई संबंध न होते हुए भी उत्पादित वस्तु अथवा सेवा की अलग-अलग क्रेताओं से अलग-अलग कीमत वसूलती है तो उसे कीमत विभेद की संज्ञा दी जाती है।

कैदी की दुविधा : द्यूत सिद्धांत में एक ऐसी स्थिति जिसमें दो खिलाड़ियों के पास केवल दो ही विकल्प होते हैं जिनका परिणाम एक

दूसरे द्वारा एक साथ लिए गए निर्णयों पर निर्भर करता है। इसे प्रायः दो कैदियों द्वारा अपराध को स्वीकार कर लेने या न करने के रूप में व्यक्त किया जाता है।

कूर्नो प्रतिमान : अल्पाधिकार का कूर्नो प्रतिमान इस मान्यता पर आधारित है कि दो प्रतिस्पर्धी फर्में एक जैसी वस्तु का उत्पादन करती हैं तथा यह निर्धारित कर कि कितना उत्पादन करना है अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती हैं। सभी फर्में अपने द्वारा किए जाने वाले उत्पादन की मात्रा का निर्धारण एक साथ करती हैं।

कीमत अनुपात या सापेक्षिक कीमत : किसी वस्तु की कीमत जो किसी अन्य वस्तु की कीमत के सापेक्ष व्यक्त की जाती है। सापेक्षिक कीमत को प्रायः दो कीमतों के अनुपात के रूप में व्यक्त किया जाता है।

कीमत सीमा : सरकार द्वारा किसी वस्तु या सेवा की अधिकतम सीमा निर्धारित कर देना।

कीमत प्रभाव : बाज़ार में उत्पाद या सेवा के लिए उपभोक्ता की मांग पर इसकी कीमत में परिवर्तन का प्रभाव पड़ता है। किसी वस्तु की कीमत पर किसी घटना के प्रभाव को भी कीमत प्रभाव कह सकते हैं। कीमत प्रभाव प्रतिस्थापन प्रभाव तथा आय प्रभाव का एक परिणामी प्रभाव है।

कुल उपयोगिता : किसी वस्तु की सभी उपभोग की गई इकाइयों से मिली उपयोगिता का योगफल।

गणनावाचक उपयोगिता : गणनावाचक उपयोगिता दृष्टिकोण नव-प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने प्रतिपादित किया था, जिन्हें विश्वास था कि उपयोगिता मापनीय है तथा ग्राहक गणनात्मक या मात्रात्मक अंक जैसे 1, 2, 3 इत्यादि में अपनी संतुष्टि को व्यक्त कर सकता है।

ग़ैर-सहयोगात्मक व्यवहार: अल्पाधिकार को सर्वोत्तम रूप में बाज़ार के भीतर उसके वास्तविक व्यवहार के रूप में परिभाषित किया जाता है। सकेंद्रीकरण अनुपात उस स्तर या सीमा का माप करता है जहाँ तक बाज़ार की कुछ फर्मों के बीच कोई एक फर्म प्रभुत्व रखती है। यह फर्में जब आपस में मिलकर कार्य करने के लिए समझौता कर लेती हैं तो उसे अल्पाधिकारी बाज़ार में सहयोगात्मक व्यवहार के रूप में जाना जाता है।

गैर-अपवर्जनीयता : भुगतान न करने वाले किसी भी उपभोक्ता को उपयोग करने से वंचित न किए जाने की स्थिति।

गैर-प्रतिद्वंद्वी : जब किसी व्यक्ति द्वारा किसी वस्तु का उपभोग किए जाने से किसी अन्य के हिस्से में कोई कमी नहीं होती।

गुणवाची अर्थशास्त्र : क्या वांछनीय है और वर्तमान दशाओं में कैसे परिवर्तनों द्वारा उसे पाया जा सकता है? इस प्रकार के प्रश्नों का अध्ययन करने वाली अर्थशास्त्र की प्रशाखा।

गिफ्फन वस्तु : ऐसी वस्तुएं जिनकी कीमत और मांग की मात्रा के बीच सीधा संबंध होता है।

घटते प्रतिफल के नियम : जब एक आगत की अधिक इकाइयों का अन्य आगत की स्थिर मात्रा के साथ प्रयोग किया जाता है, परिवर्ती आगत का सीमांत उत्पाद एक बिंदु के पश्चात् घटता है।

डूबत लागत : डूबत लागत वह लागत है जो व्यय की जा चुकी है तथा जिसे वापस प्राप्त नहीं किया जा सकता।

तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर : प्रतिस्थापन की दर या प्रतिस्थापन की सीमांत दर वह दर है जहाँ किसी अन्य वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन (सीमांत इकाई) करने के लिए किसी वस्तु की कुछ मात्रा का त्याग करना पड़ता है। यह मानकर चला जाता है कि दोनों ही वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए एक जैसे दुर्लभ आगतों का प्रयोग किया जाता है। रूपांतरण की सीमांत दर उत्पादन संभावना सीमा (PPF) से संबद्ध है जो समान संसाधनों को प्रयुक्त करते हुए दो वस्तुओं के संभाव्य उत्पादन को व्यक्त करता है।

तुलनात्मक लाभ : किसी देश A को वस्तु x के उत्पादन में तुलनात्मक लाभ प्राप्त है यदि घरेलू स्तर पर उसकी लागत किसी अन्य देश में उसी वस्तु की लागत की तुलना में कम है।

दीर्घकाल : वह अवधि जिसमें प्लांट की क्षमता सहित सभी आगतें परिवर्तनशील हैं।

न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम : सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार के रोज़गारों के लिए निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी से संबंधित कानून।

निःशुल्क सवारी : किसी व्यक्ति द्वारा किसी वस्तु या सेवा का मूल्य चुकाए बिना उसका उपयोग करना।

नैतिक द्वंद्व : किसी दूसरे पक्ष से जानबूझ कर कुछ सूचना का छुपाया जाना।

नति परिवर्तन बिंदु (Inflexion point) : वह बिंदु जहां कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढ़ना बंद करता है तथा घटती दर से बढ़ना आरंभ करता है नति परिवर्तन बिंदु कहलाता है।

निर्भर चर : ऐसा चर जिसका मान किसी स्वतंत्र चर में परिवर्तन के साथ ही बदलता हो।

निकृष्ट पदार्थ : ऐसी वस्तुएँ जिनकी मांग की मात्रा और उपभोक्ता की आय में विलोम संबंध होता है।

निजी पदार्थ : ऐसे पदार्थ जिनका उपभोग चुने हुए प्रयोक्ताओं तक सीमित रखा जा सके। इस तरह से इनका स्वरूप विभाजनीय हो जाता है।

पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार : एक बाज़ार पूर्ण प्रतियोगिता वाला बाज़ार है यदि इससे अनेक उपभोक्ता एवं अनेक फर्में हैं, किसी के पास भी बाज़ार का कोई बड़ा हिस्सा नहीं है, सभी फर्में एक जैसी वस्तु का उत्पादन करती हैं, बाज़ार में प्रवेश करने तथा बाज़ार से बाहर निकलने में कोई बाधा नहीं है तथा उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं को बाज़ार की पूरी जानकारी है।

पॉल स्वीज़ी का कोनेदार मांग वक्र : कोनेदार माँग वक्र का सिद्धांत अल्पाधिकार एवं एकाधिकारिक प्रतियोगिता का एक आर्थिक सिद्धांत है।

प्रतिकूल चयन : जब असमान सूचना के चलते किसी सौदे का एक पक्ष को अर्द्ध अनुकूलतम चयन करना पड़ता है।

पदार्थ : ऐसी चीज़ें जिनमें उपयोगिता हो अथवा जिसका अन्य वस्तुओं/सेवाओं के उत्पादन में प्रयोग हो सके।

पैमाने के स्थिर प्रतिफल : पैमाने के स्थिर प्रतिफल से तात्पर्य है कि जब सभी आगतों को एक निश्चित अनुपात में बढ़ाया जाता है, तब उत्पादन भी समान अनुपात में बढ़ता है ।

पैमाने के घटते प्रतिफल : पैमाने के घटते प्रतिफल का संदर्भ उस स्थिति से है जब उत्पाद आगतों की तुलना में कम अनुपात में बढ़ता है।

पैमाने के बढ़ते प्रतिफल : पैमाने के बढ़ते प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जब उत्पाद आगतों की तुलना में अधिक अनुपात में बढ़ता है।

प्रतिस्थापक वस्तु : वह वस्तु जिसकी मांग का किसी वस्तु की मांग के साथ विलोम संबंध हो।

पूर्ति का संकुचन : कीमत में कमी के कारण आपूर्ति की मात्रा में आयी कमी।

प्रतिस्थापन प्रभाव : कीमत में वृद्धि के कारण मांग में आया वह प्रभाव जो एक उपभोक्ता को एक सापेक्षिक रूप से कम कीमत वाली वस्तु की उच्च कीमत वाली से अधिक खरीदने के लिए प्रेरित करता है।

प्रतिस्थापन लागत : प्रतिस्थापन लागत वह लागत है जो संपत्ति का पुनर्स्थापन करने पर व्यय होगा (प्रतिस्थापन लागत समान प्रकार की नई संपत्ति की वर्तमान लागत होती है)।

प्रतिस्थापन प्रभाव : अन्य कीमतें स्थिर रहने पर एक वस्तु की कीमत के वह प्रभाव जो अन्य वस्तुओं के स्थान पर इस वस्तु की मांग में आए परिवर्तन को दिखाते हैं।

प्रयोग मूल्य : वस्तुओं की उपयोगिता।

प्रवाह चर : ऐसा चर जिसे किसी अवधि के अनुसार ही अभिव्यक्त किया जाता है।

ब्याज : पूँजी के उपयोग हेतु भुगतान की जाने वाली धनराशि ब्याज ही ब्याज वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में प्रयुक्त की जाने वाली मानव निर्मित वस्तुओं (मशीनों) के लिए भुगतान किया जाता है।

बाह्यताएँ : किसी अर्थव्यवस्था में बाह्यताएँ उस समय उत्पन्न होती हैं जब उत्पादन या उपभोग किसी ऐसे तीसरे पक्ष को प्रभावित करता है जिसका ऐसे उत्पादन या उपभोग से कोई संबंध नहीं होता।

बाह्य मितव्ययताएं : जब एक फर्म उत्पादन आरंभ करती है, उसे अनेक ऐसी मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं जिसके लिए उसकी स्वयं की रणनीति या योजनाएं जिम्मेदार नहीं होतीं। ये सभी फर्मों की बाह्य मितव्ययताएं कहलाती हैं ।

बाह्य अपमितव्ययताएं : जब उत्पादन के पैमाने में विस्तार किया जाता है, तब अनेक ऐसी अपमितव्ययताएं भी उत्पन्न होती हैं जिनका स्वयं फर्म पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता किंतु इनका भार अन्य फर्मों को सहन करना पड़ता है। इन्हें बाह्य अमितव्ययताओं के तौर पर जाना जाता है ।

बजट रेखा : बजट रेखा, जिसे बजट प्रतिबंध भी कहा जाता है दो वस्तुओं के उन सभी संयोजनों को दर्शाता है जिन्हें एक उपभोक्ता बाज़ार कीमतों के दिए हुए होने पर तथा विशिष्ट आय स्तर के अंतर्गत खरीद सकता है।

बाज़ार अपूर्णताएँ : बाज़ार की ऐसी दशाएं जो पूर्ण प्रतियोगिता के अनुरूप नहीं हैं।

बाज़ार विफलताएँ : अर्थव्यवस्था में संसाधनों के दक्ष आवंटन को प्राप्त करने में लिए बाज़ार तंत्र की विफलता।

मज़दूरी : तकनीकी विशेषज्ञता और शारीरिक श्रम के द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन हेतु किए गए मानव प्रयास के रूप में श्रमिक को भुगतान किए जाने वाले पारितोषक को मज़दूरी कहते हैं।

माँग : नियत इकाई कीमत पर किसी वस्तु/सेवा की जितनी इकाइयाँ हमारा उपभोक्ता प्रति समयावधि खरीदने को तत्पर हो।

मांग की आय लोच : उपभोक्ता की आय में आनुपातिक परिवर्तन के प्रति उपभोक्ता की मांग की संवेदनशीलता।

माँग में परिवर्तन : पूरे माँग वक्र का विवर्तन या खिसकाव।

माँग की मात्रा में परिवर्तन : वस्तु की कीमत में परिवर्तन के कारण मांग वक्र के एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक चलना।

मौद्रिक विनिमय : मुद्रा के बदले किसी वस्तु/सेवा की बिक्री।

यथार्थवादी या सकारात्मक अर्थशास्त्र : किसी यथास्थिति की वांछनीयता पर टिप्पणी किए बिना और उसमें परिवर्तन के सुझाव दिए बिना उसका निरूपण करने वाली अर्थशास्त्र की प्रशाखा।

लगान : भूमि के उपयोग हेतु किए जाने वाले भुगतान को लगान कहते हैं। उत्पादन प्रक्रिया में प्रयुक्त किए जाने वाले समस्त प्राकृतिक संसाधन भूमि के अंतर्गत आते हैं।

लाभ : उत्पादन प्रक्रिया में अपने संगठन एवं कौशल के उपयोग तथा जोखिम वहन करने के लिए उद्यमी को प्राप्त होने वाला पारितोषक लाभ है।

लेखांकन लागत : लेखांकन लागत से अभिप्राय फर्म के वास्तविक व्यय तथा पूँजीगत उपकरणों के मूल्यह्रास व्यय से है।

व्यापार संगुट : प्रतिस्पर्धा को नियंत्रित रखकर कीमतों को ऊँचा रखने के उद्देश्य से विनिर्माताओं या आपूर्तिकर्ताओं का संघ।

व्युत्पन्न माँग : उत्पत्ति के साधनों की माँग इसलिए की जाती है क्योंकि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग की जाती है। इसलिए साधनों की माँग व्युत्पन्न माँग है।

वी.एम.पी. : सीमांत उत्पाद का मूल्य अर्थात् कीमत एवं साधन के सीमांत उत्पाद का गुणनफल।

वाणिज्यवाद : व्यापार का यह सिद्धांत बताता है कि देश को निर्यातों को बढ़ावा देना चाहिए तथा आयातों को हतोत्साहित करना चाहिए। वाणिज्यवादियों का तर्क था कि राष्ट्र अपने निर्यातों में वृद्धि करके तथा आयातों में कमी लाकर ही बहुमूल्य धातुओं (सोना) के रूप में अधिकाधिक संपत्ति संचित कर सकता है।

विकुंचित वक्र (Non-linear Curve) : वह आपूर्ति वक्र जो एक सीधी रेखा न हो।

विशेष गुण पदार्थ (Merit Goods) : ऐसी वस्तुएँ/सेवाएँ जिनका उपभोग उनके उपभोक्ता ही नहीं पूरे समाज को भी लाभान्वित करता है।

विलासिताएँ : ऐसी वस्तुएं जो सामाजिक मान-प्रतिष्ठा के लिए ही प्रयोग की जाती हैं।

वस्तु विनियम : वस्तुओं/सेवाओं के बदले वस्तुएँ/सेवाओं का ही क्रय-विक्रय या विनिमय।

विनियम मूल्य : किसी वस्तु की बाज़ार में प्रचलित कीमत।

व्यष्टि अर्थशास्त्र : व्यक्ति स्तरीय आर्थिक इकाइयों या उनके समूहों अथवा वस्तु स्तर पर कीमत आदि चरों का अध्ययन करने वाली अर्थशास्त्र की प्रशाखा।

वृद्धिशील लागत : उत्पादन में एक वृद्धि होने के परिणामस्वरूप कुल लागत में होने वाली वृद्धि वृद्धिशील लागत होती है।

रेखीय समरूप उत्पादन फलन : जब उत्पाद में समान अनुपात में वृद्धि होती है जिसमें आगतों में वृद्धि हुई है, उत्पादन फलन रेखीय समरूप है। उदाहरणार्थ, यदि श्रम तथा पूँजी में λ गुणा की वृद्धि हुई है, परिणामस्वरूप, उत्पाद में भी λ गुणा वृद्धि होती है, तब उत्पादन फलन रेखीय समरूप है।

सामान्य लाभ : सामान्य लाभ एक ऐसी आर्थिक दशा है जो उस समय उत्पन्न होती है जबकि फर्म के कुल आगम एवं कुल लागत के बीच का अंतर शून्य होता है। सरल शब्दों में, किसी फर्म को बाज़ार में प्रतिस्पर्धी बनाए रखने के लिए आवश्यक लाभ ही सामान्य लाभ है।

सहयोगात्मक व्यवहार : सहयोगात्मक अल्पाधिकार के अंतर्गत कुछ ही उत्पादक होते हैं जो संसाधनों का आवंटन आपस में करने तथा उत्पादन की कीमत निर्धारित करने के लिए आपस में सहयोग करते हैं। व्यापार संगुट, सहयोगात्मक अल्पाधिकार का एक उदाहरण है।

स्टैकिलबर्ग प्रतिमान : स्टैकलबर्ग प्रतिमान अर्थशास्त्र में एक रणनीतिक द्यूत है जिसमें नेतृत्व करने वाली फर्में पहले चाल चलती हैं

अर्थात् निर्णय लेती हैं जिसके क्रम में अन्य फर्में निर्णय लेती हैं। स्टैकलबर्ग संतुलन बनाए रखने में आगे बाधाएं आती हैं।

सीमांत (भौतिक उत्पाद) : उत्पत्ति के अन्य साधनों को स्थिर रखते हुए किसी एक साधन की एक अतिरिक्त इकाई को काम पर लगाने से उत्पादित मात्रा में हुआ परिवर्तन।

सीमांत आगम उत्पाद : सीमांत भौतिक उत्पाद में सीमांत आगम से गुणा करने पर प्राप्त गुणनफल।

संसाधनों का दक्ष आवंटन : आगतों, उत्पादन और उत्पादन का ऐसा वितरण जो अर्थव्यवस्था में किसी परिवर्तन से किसी भी व्यक्ति को खराब स्थिति में पहुँचाएं बिना किसी अन्य व्यक्ति को बेहतर स्थिति में न पहुँचा पाए (समभाव वक्र चित्र द्वारा मापित)।

समभाव वक्र या उपयोगिता सीमा : एक समभाव वक्र दो आर्थिक वस्तुओं के उन विभिन्न संयोगों को इंगित करता है जिन पर उपभोक्ता का व्यवहार समभावपूर्ण रहता है, भले ही वह कोई भी संयोग चुन ले।

समोत्पाद वक्र : समोत्पाद वक्र एक ऐसा ग्राफ है जिस पर स्थित प्रत्येक बिंदु पर सभी आगतों के संयोग वस्तु की एकसमान मात्रा उत्पादित करते हैं।

सीमांत प्रतिस्थापन दर : प्रतिस्थापन की सीमांत दर ऐसी दर है जिस पर कोई उपभोक्ता किसी एक वस्तु की मात्रा को किसी दूसरी वस्तु की मात्रा से प्रतिस्थापित करने के लिए तैयार है, उस सीमा तक जब तक कि ऐसा करने से उसकी संतुष्टि का स्तर एक समान रहे। इसे समभाव वक्र सिद्धांत में उपभोक्ता के व्यवहार का विश्लेषण करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

सार्वजनिक वस्तुएँ : ऐसी वस्तुएँ एवं सेवाएँ जिनके उपयोग से किसी भी व्यक्ति को वंचित नहीं किया जा सकता एवं किसी एक व्यक्ति द्वारा ऐसी वस्तुओं/सेवाओं का उपयोग किए जाने से इन्हीं वस्तुओं/सेवाओं के उपयोग में किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई कमी नहीं आती।

सार्वजनिक हस्तक्षेप : वस्तुओं, सेवाओं एवं अन्य कारकों के लिए बाज़ार में सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्य।

सार्वजनिक प्रावधान : सरकारी अधिकारियों/निकायों द्वारा सामाजिक दृष्टि से वांछित एवं महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ एवं सेवाएँ अंतिम उपभोक्ताओं तक पहुँचाना।

सामूहिक संसाधन : जहाँ किसी संसाधन का कोई स्वामी नहीं होता लेकिन जिनके प्रयुक्तकर्ता अनेक होते हैं।

साधन संपन्नता : किसी देश के पास भूमि, श्रम और पूँजी आदि जैसे साधनों की उपलब्धता।

सार्वजनिक पदार्थ : ऐसी वस्तुएँ/सेवाएँ जिनकी सुलभता को कुछ ही व्यक्तियों तक सीमित नहीं रखा जा सकता। इनके

हितलाभ अविभाज्य होते हैं– किसी व्यक्ति को उनसे लाभान्वित होने से वंचित या बहिष्कृत नहीं रखा जा सकता।

सुविधाएँ : ऐसे पदार्थ की चर्चा हमारी उत्पादन क्षमता और सुख-सुविधा से वर्धित करने में सहायक हों।

समष्टि अर्थशास्त्र : अर्थशास्त्र की वह प्रशाखा जिसमें समूचे अर्थतंत्र या उसके एक बहुत बड़े प्रखंड का अध्ययन होता है।

सीमांत इकाई : विचारगत चर की अंतिम इकाई का मान।

सीमांत उपयोगिता : यह उपभोक्ता द्वारा एक इकाई अधिक उपभोग करने पर उसे प्राप्त उपयोगिता है। यह एक महत्त्वपूर्ण संकल्पना है, अर्थशास्त्री इसी को प्रयोग कर यह आकलन करते हैं कि कोई उपभोक्ता किसी वस्तु की कितनी इकाइयाँ खरीदने को तैयार होगा।

स्टॉक (या भंडार) चर : ऐसा चर जिसका परिमाण किसी समय बिंदु पर ही मापा जाता है।

संपूरक पदार्थ : ऐसी वस्तु जिसकी मांग का किसी वस्तु के उपभोग के साथ सीधा संबंध हो।

समलागत रेखा : एक समलागत रेखा, आगतों के विभिन्न संयोगों को दर्शाती है जो एक दी गई व्यय राशि से क्रय की जा सकती है।

सम-उत्पाद वक्र : एक सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के दो साधनों के सभी संयोगों का ज्यामातीय प्रस्तुतीकरण है जो उत्पाद का समान स्तर प्राप्त करता है।

सीमांत तकनीकी प्रतिस्थान दर ($MRTS_{L,K}$) : साधन श्रम (L) के लिए साधन पूँजी (K) की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन की दर पूँजी (K) की वह मात्रा में कमी है, जो कि श्रम (L) की मात्रा में एक इकाई की वृद्धि करने पर उत्पाद स्तर को अपरिवर्तित रखने के लिए की जाती है।

स्पष्ट लागत : स्पष्ट लागतें एक फर्म तथा अन्य पक्षों के बीच होने वाले लेन-देन के कारण उत्पन्न होती हैं जिसमें फर्म उत्पादन करने के लिए आदतों या सेवाओं का क्रय करती है।

श्रम संघ : अपने अधिकारों के संरक्षण हेतु श्रमिकों का एक मान्यता प्राप्त संगठन।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) Kautsoyiannis, A. (1979), *Modern Micro Economics*, London: Macmillan.

2) Lipsey, RG (1979), *An Introduction to Positive Economics*, English Language Book Society.

3) Pindyck, Robert S. and Daniel Rubinfield, and Prem L. Mehta (2006), *Micro Economics*, An imprint of Pearson Education.

4) Case, Karl E. and Ray C. Fair (2015), *Principles of Economics*, Pearson Education, New Delhi.

5) Stiglitz, J.E. and Carl E. Walsh (2014), *Economics*, viva Books, New Delhi.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY